

ओ३म् तत्सत्
सहज मार्ग
के
दस उसूलों^१ की शरह^२



मुसनिफ़^३

श्री रामचन्द्र

प्रेसीडेंट

श्री रामचन्द्र मिशन, शाहजहाँपुर (यू० पी०)

जैर^४ एहत्मा^५ श्री रामचन्द्र मिशन पब्लिशिंग डिपो,
शाहजहाँपुर छपकर शाया^६ हुआ

सन् १९४८ ई०

जुमला हकूक महफूज^७ हैं]

[कीमत फ्री जिल्द ५]

१. नियम २. व्याख्या ३. लेखक ४. में ५. प्रबन्ध ६. प्रकाशित
७. सर्वाधिकार सुरक्षित ।

प्रथम संस्करण सन् १९७४ : २००० प्रतियां

© प्रकाशक : प्रकाशन विभाग
श्री रामचन्द्र मिशन
शाहजहाँपुर
उत्तर प्रदेश (भारतवर्ष)

मुद्रक : देव भारती प्रेस
१०, दरभंगा रोड, इलाहाबाद

प्रकाशकीय टिप्पणी

मूल पुस्तक "सहज मार्ग के दस उसूलों की शरह", श्री रामचन्द्र मिशन के संस्थापक-अध्यक्ष श्री रामचन्द्र जी (बाबूजी) महाराज की प्रारम्भिक एवं अनुपम कृति, सन् १९४६ में उर्दू में लिखी गई थी जिसका अंग्रेजी संस्करण Commentary on Ten Commandments of 'SAHAJ MARG' अब तक दो बार प्रकाशित हो चुका है। हिन्दी-भाषियों के हृदय में मूलपुस्तक के अध्ययन की बड़ी उत्कण्ठा थी। परमपूज्य "बाबूजी" की इच्छा थी कि हिन्दी में प्रकाशन किया जाय पर पुस्तक का मौलिक स्वरूप ज्यों का त्यों बना रहे। हमें हर्ष है कि आज हम मूल पुस्तक का हिन्दी लिप्यन्तरण उनके हाथों में दे रहे हैं। साथ ही, पाठकों की सुविधा के लिये उर्दू एवं फ़ारसी के कठिन शब्दों का हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत पुस्तक में दे दिया गया है।

इस स्पृहणीय कार्य के लिये हम इलाहाबाद केन्द्र के प्रशिक्षकों (Preceptors) श्री मिश्री लाल चतुर्वेदी भूतपूर्व जज, इलाहाबाद हाई कोर्ट तथा श्री लक्ष्मी शंकर, प्रिंसिपल, के० पी० युनिवर्सिटी कालेज, इलाहाबाद, के आभारी हैं और श्री शिवप्रसाद जी के उद्यत सहयोग की सराहना करते हैं।

आशा है, पाठकगण इससे लाभान्वित होंगे।

बसन्तपंचमी

२८ जनवरी, १९७४

अधीक्षक

प्रकाशन विभाग,
श्री रामचन्द्र मिशन,
शाहजहाँपुर
उत्तर प्रदेश

विषय सूची

विषय	पृष्ठ
दिवाचा (प्रस्तावना) ...	१
कसीदा (श्रद्धांजलि) ..	७
इल्लमास (निवेदन) ...	११
उसूल नम्बर १ ...	१२
" २ ..	२६
" ३ ...	४२
" ४ ...	४६
" ५ ...	५३
" ६ ...	५७
" ७ ...	६०
" ८ ...	६३
" ९ ...	६६
" १० ...	६८

ओ३म् तत्सत्

कहें क्या है अजब राहे तरोकत ।
न है कुछ सोज नै साजे हकीकत ।
निहाँ जुल्मत के परदे में हकीकत ।
अयाँ जुल्मत के परदे में हकीकत ।*

—:०:—

*आध्यात्मिक मार्ग के विषय में क्या कहा जाय ? इसकी गति विचित्र है । परम सत्ता समस्त बाह्याभ्यन्तर अनुभूतियों एवं संवेदनाओं से परे है । यह अज्ञान के पर्दे में छिपा है परन्तु इसी पर्दे से प्रकाशित भी होता है ।

दिवाचा (प्रस्तावना)

दुनियां की हर एक संस्था अपना जुदागाना (भिन्न) रंग रखती है और ख्यालशत का वही मर्कज (केन्द्र) रहता है। कोई बड़ी हस्ती ही ऐसी हर संस्था की बानी (संस्थापक) होती है जो कि इसी गरज (उद्देश्य) से दुनियां में आती है और क्रुदरत के एहकाम (आज्ञा) के मुताबिक काम करती है। इसको मुख्तलिफ़ तरीकों से तरतीब (व्यवस्थित) देने के लिए बड़े-बड़े महात्माओं का जन्म होता है। जब दुनियां में अंधकार बढ़ जाता है तो हमेशा कोई न कोई ऐसी हस्ती जरूर पैदा होती है जो उस तारीकी (अंधेरे) के परदे को हटा देती है।

रुहानियत (आध्यात्मिकता) के मैदान में हिन्दू लोग अपना अस्ल कर्तव्य भूलकर इससे दूर हो गये। यह चीज उनसे छिनकर दूसरों के हाथ में चली गई। नतीजा यह हुआ कि असलियत से बिल्कुल शाफ़िल (अनभिज्ञ) हो गये। इस गरज से क्रुदरत को यह जरूरत लाहक़ (अत्यावश्यक) हुई कि ऐसी हस्ती मिस्ल समर्थ गुरु महात्मा रामचन्द्र जी (फ़तेहगढ़) को जगत के सुधार के लिये भेजे।

आपका जन्म २ फ़रवरी सन् १८७३ ई० बरोज बसन्त पंचमी हुआ। रुहानियत के मैदान में अपना पूरा हक़ अदा करने के बाद

आपने इस जहाँ फ़ानी (नाशवान दुनियाँ) को ख़ैरबाद (विदा) कहा । आपके बाद यह काम आपके अफ़ज़लतरीन (योग्यतम) शाग़िद महात्मा रामचन्द्र जी शाहजहाँपुरी के सिपुर्द हुआ जिनको आँ हज़रत (महान-व्यक्ति) की दौरान हयात (जीवनकाल) में रुहानी मेराज (ऊँची पहुँच) मयस्सर होना शुरू हो गया था जो आइन्दा रुहानी तरक्कियात के लिये ज़रूरी था । बिल आख़िर (अन्ततः) विसाल (ब्रह्मलोक) आँह-ज़रत के बारह साल बाद मन्शाय आलो (उनकी इच्छा) का वाक़ई इन्क़शाफ़ (पूर्ति) हुआ जैसा कि अकसर ज़माने क़दीम (पूर्व काल से) से ऐसी बुजुर्ग हस्तियों के मुतल्लिक होता आया है और जिसकी मिसालें भी मौजूद हैं । इस बात का इन्हिसार (निर्भर) कुल्लियतन (पूर्णतया) उस बुजुर्ग हस्ती पर ही होता है कि हर किस्म का तग़ैय्युर (परिवर्तन) हस्व एहक़ाम (आज्ञानुसार) कुदरत अमल में लाकर कारबन्द (कार्यान्वित) हो । समर्थ गुरु अपने शिष्यों में से किसी बेहतरीन शिष्य में अपने आपको मुत्तक़िल (प्रविष्ट) कर सकता है जो उसके ज़ानशीन (उत्तराधिकारी) की हैसियत से काम करने के लायक़ हो । चुँनाचे सन् १६२८ ई० में जनाब हज़रत क़िवला ने अपने एक क़ाबिल तरीन शिष्य मुन्शी मदन मोहन लाल साहब से जो उस वक़्त शाहजहाँपुर सतसंग के मुइत्तमिम (प्रबन्धक) थे फ़रमाया था कि “रामचन्द्र चिरागे ख़ान्दान होगा” । इस बात का तज़क़िरा उस ज़माने के मख़सूस (प्रमुख) सतसंगी भ्राइयों से भी किया गया था ।

किसी शख्स को इस तरह अपने मानिन्द बनाना आँ हज़रत जैसी बुजुर्ग हस्ती के लिये कोई नई बात न थी । आपके पैरो (शिष्यों) में से हर एक जानता है कि आपको यह कुदरत (शक्ति) हासिल थी कि एक निगाह में ज़रूरत ज़माने के मुनाबिक़ आदमी बुनादे । आपकी वसात (क्षमता) का सही अन्दाज़ा बजुज़ (सिवाय) जात पाक (परमेश्वर) के दूसरे को मुहाल (कठिन) है । यह नियम और उनका तशरीही

(व्याख्या) फ़िलस्फ़ा आपकी लामहदूद (असीम) कुदरत का एक करश्मा है। यह रहानी फ़िलस्फ़ा उन लोगों को हैरत में डालेगा जो इसका मुताला (अध्ययन) बग़ौर फ़रमायेंगे और उसकी समझने की काबिलियत रखते होंगे।

लोग महात्मा रामचन्द्र जी शाहजहाँपुरी की इस्तैदाद (योग्यता) का अन्दाज़ा उन लहरों की रवानी से लगा सकते हैं जो कि आपके दिल से रवां हुई है। इन्सानी ज़िन्दगी की उक़दा कुशाई (रहस्य खोलने) के लिए आपने 'सहज मार्ग', रायज (चलाया) किया। इस नाम का इनकेशाफ़ (निर्देश) आप पर आलमेबाला (ऊपर) से हुआ है। लोग इसे यावर (विश्वास) करें या न करें मगर कुदरत की रवानी इसी रुख़ पर है। इस मसले पर इख़लाफ़ राय हो सकता है जैसा कि अमूमन होता चला आया है। बुजुर्ग़ानि सुल्फ़ (महान दार्शनिक) की ज़िन्दगी में ऐसे वाक़यात आमतौर पर पेश आये हैं जबकि लोगों ने उनको हर तरह से बुरा भला कहा है। श्री कृष्ण जी महाराज और दूसरे बुजुर्ग़ानि सुल्फ़ इसकी मिसालें हैं। एक बड़ी मुश्किल यह है कि लोग अमूमन किसी बड़ी हस्ती की कुदरत का अन्दाज़ा किये बग़ौर नतीजा अख़्त (निकाल) कर लेते हैं जिसका तज़ुर्बा सिर्फ़ अमली तौर पर ही हो सकता है। आज्ञादी तबा (स्वच्छन्दता) जो उसको कुदरत से मिलती है उस बुजुर्ग़ हस्ती की तबज्जह इन तरीक़ों की तरफ़ मबजूल (निदेशित) कर देती है जो कि अबाम की बहबूदी के लिए हो। इसको ज़रूरी ताक़त कुदरत से मिलती है जो उससे कुछ भी उठा नहीं रखती। वह कुदरत के मर्ज़ों के मुताबिक़ ऐसे तरीक़े अमल में लाता है जिनकी रहानी तरक्की के लिये उस वक़्त ज़रूरत होती है। उसको अख़्तयार होता है कि विला लेहाज़ नतायज (परिणाम) जुमदा बातों की दुस्ती और इस्लाह (सुधार) के लिये मुनासिब तौर पर अमल करे और कुदरत की रवानी उसकी मददगार रहती है।

दूसरे लफ़्ज़ों में कुदरत उसको उन तरीकों और कामों में मदद देती है जो कि उसने बनीनी (मानव जाति) के फ़ायदे के लिये अख़्तयार किये हैं। यह क़ानून कुदरत है जो टल नहीं सकता। हिदायतें हमेशा अस्ल भण्डार से आती हैं। वह उन हिदायतों के मुताबिक़ जो उस पर बराह रास्त (सीधे) नाज़िल (उतरती) होती हैं काम करने के लिये खुद मुख़्तार होता है। अब 'सहज मार्ग' का बानी भी इस तरह पर खुद मुख़्तार होते हुए ज़रूरत ज़माने के मुताबिक़ बनीनी की रूहानी तरक्की के लिए कारबन्द है। उस पुरानी चीज़ को एहक़ाम कुदरत के मुताबिक़ नया जामा पहनाया गया है। नियम मुरत्तिब (बनाये) किये गये हैं और उनकी तह में जो फ़िलस्फ़ा है उस पर रोशनी डाली गई है जिसके पढ़ने से सहज मार्ग के मूमिद (संस्थापक) की इस्तदाद (क्षमता) का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। इसकी तह में जो सायन्स है उस पर आज तक किसी की निगाह ही नहीं गई। इन्सान और जात (परमात्मा) के दरमियानी ताल्लुकात पर रोशनी डाली गई है और इससे दुनिया के बड़े-बड़े फ़िलासफ़रों को शौरो ख़ौज (गहन अध्ययन) का मौका मिलेगा। इससे दो मक़सूद हासिल होंगे। अन्वदल यह कि इनको रोज़ाना जिन्दगी में अख़्तयार करने से इन्सान वाक़ई इन्सान बन सकता है। दोयम यह कि जो रूहानी फ़िलस्फ़ा के आलम बनना चाहते हैं वह इसको पढ़कर लफ़्ज़त दिमागी हासिल कर सकते हैं मगर सिर्फ़ इसका अमली पहलू ही इन्सान का मुस्तक़बिल (भविष्य) बना सकता है। और यह तब ही मुमकिन है जबकि मुतलाशी (अभ्यासी) खुद उस रूहानी मुहक्किक (पूर्णज्ञाता) की सोहबत से बारयाब (लाभान्वित) हो। इस किताब की फ़िलासफ़ी पर अगर काफ़ी शौर किया जाय तो तहय्युर (आश्चर्य) का आलम पेश नज़र होगा।

मैं पढ़ने वालों से दरखास्त करूँगा कि वे इसका मशाहिद (अध्ययन) अन्दरूनी आँखों से करें। इस तरह बश्म हकीक़त खुल

जायगी । कुदरत के राज योगियों के दिलों में मखफ़ी (छिपे) हैं । इनके दिलों का मुताला करके रुहानी सायन्स से कुर्बत (परिचय) हासिल कीजिये । यह सिर्फ़ उस वक्त मुमकिन है जबकि कोई शख्स उस योगी की हिदायतों के मुताबिक़ अमली पहलू अस्तयार करे । अमूमन लोग इस चीज़ को बहुत ही पेचीदा ख़याल करते हैं मगर यह सिर्फ़ एक परदा है जो दरमियान में हायल (पड़ा) रहता है । आसान चीज़ हासिल करने के लिये आसान तरीका ही अमल में लावो । किताब का हर जुमला निहायत ही पुरमानी (महत्वपूर्ण) है । मुताला सरूर दिमागी (मानसिक आह्लाद) बरख़्शेगा (देगा) और अमल (अभ्यास) एहसास वातिनी (आन्तरिक अनुभव) ॥

करुणा शंकर
 पूरनपुर
 ज़िला-पीलीभीत



समर्थ गुरु
महात्मा श्री रामचन्द्र जी महाराज
फ़तेहगढ़ (उत्तर प्रदेश)
(१८७३-१९३१)

क़सीदा व यादगार समर्थ गुरु श्री महात्मा रामचन्द्र जी महाराज फ़तेहगढ़

आफ़ताबे^१ मारफ़त^२ ऐ^३ नुक्तादाने मारफ़त ।

^४रहनुमाये ^५सालिका ऐ ^६जिस्मोज़ाने मारफ़त ॥

तेरी हर ^७तरज़े ^८रहायश में थी शाने मारफ़त ।

हर अदा में थी तेरी ^९नूरे ^{१०}जँहाने मारफ़त ॥

हो चुका गो वस्ल^{११} फिर भी है समाधि पर वह नूर ।

^{१२}ज़र्रे ज़र्रे में है अब भी ^{१३}आनो बाने मारफ़त ॥

हर तरफ़ देखा जो तूने ^{१४}मतलये ^{१५}जुल्मत-मुआब ।

तूने बदली सरज़मीनो-आसमाने मारफ़त ॥

(१) सूर्य; (२) ब्रह्म-ज्ञान; (३) भेद जानने वाला; (४) राह
बताने वाला; (५) डूबे हुये (६) शरीर व आत्मा; (७) तरीका, ढंग;
(८) रहन-सहन; (९) प्रकाश; (१०) संसार; (११) योग (स्वर्गवास);
(१२) कण-कण; (१३) शान शौकत; (१४) पूर्वी आकाश; (१५)
तमग्रसित (अंधेरा);

बनके ^{१६}मूजिद इकसहज से मार्ग की डाली ^{१७}बिना ।

इक नई बुनियाद पर रखा मकाने मारफ़्त ॥

^{१८}जुबिशे ^{१९}अबरू में थी क्या जाने क्या-क्या ^{२०}आबोताब ।

जगमग उठा था जिससे आसमाने मारफ़्त ॥

फूँक दी वह ^{२१}रूह जिसका ^{२२}फ़ैज़ है अब तक ^{२३}रवां ।

हर तरफ़ फूला फला है ^{२४}गुलिस्ताने मारफ़्त ॥

हर ^{२५}तकल्लुम में थी तेरी प्रेम की ^{२६}मौजें रवां ।

हर इशारे में रवां थी ^{२७}दास्ताने मारफ़्त ॥

^{२८}दीदनी था ^{२९}सब्री-^{३०}इस्तकलाल का ^{३१}हुस्ने कमाल ।

तुझ पै थे सी जां से कुर्बान ^{३२}शायक़ाने मारफ़्त ॥

सच हुआ जो कुछ कहा था तूने ^{३३}बरवक्ते विसाल ।

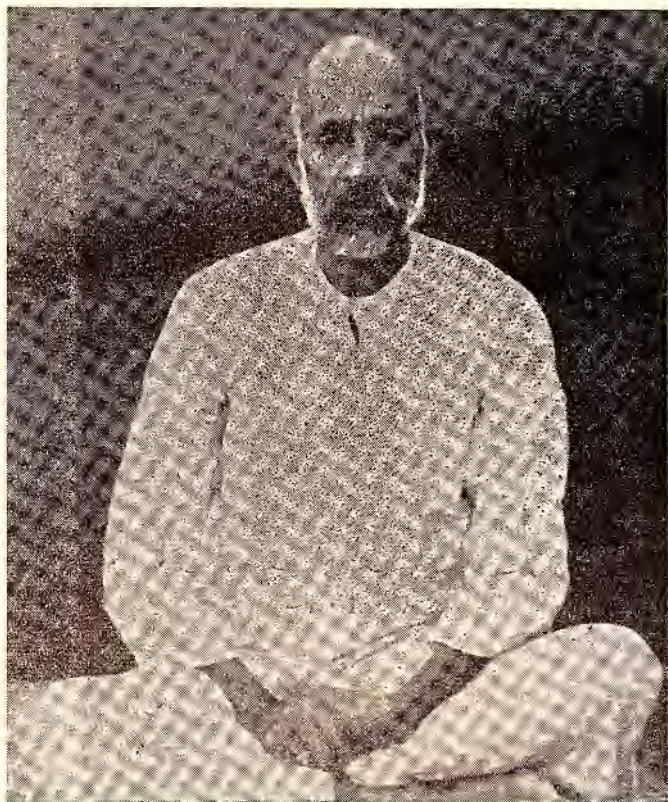
जाग उठेगा खुद ही ^{३४}बख़्ते ^{३५}खुफ़्तगाने मारफ़्त ॥

(१६) आविष्कार कर्ता; (१७) बुनियाद, नींव; (१८) हिलना; (१९) साथे पर आँख का ऊपरी भाग, भौं; (२०) चमक-दमक; (२१) जगृति; (२२) लाभ, श्रोत; (२३) जारी; (२४) बर्गचा; (२५) बातचीत; (२६) लहरें; (२७) कहानी; (२८) दर्शनीय; (२९) सन्तोष; (३०) स्थिरता; (३१) परिपूर्णत्व का सौन्दर्य; (३२) शौक रखने वाले; (३३) अन्तिम समय में; (३४) भाग्य; (३५) सोने वाले;

“मेरे परवानो^{३६} की खातिर शमाँ जल उठेगी खुद ।
खुद बखुद दौड़ेंगे उस पर तालिबाने^{३७} मारफ़त” ॥
आज है फ़ज़लो करम से तेरे वह रौशन चिराग़ ।
रौशनी पाते हैं जिससे आशिक़ाने मारफ़त ॥
चश्म हक़ बी^{३८} देख ले बिसमिल निगाहे शौक़ से ।
फूलता फलता है कैसा बोस्ताने^{३९} मारफ़त ॥

अजबलम मदनमोहन लाल श्रीवास्तव
वकील बदायूँ
यके अज खादिमान जनाव हज़रत क़िबलेममदूह
(उस महान विभूति का एक अकिचन सेवक)

(३६) प्रेमी, निछावर होने वाले; (३७) इच्छुक; (३८) सत्य दृष्टा;
(३९) बाग़।



श्री रामचन्द्र जी महाराज
शाहजहाँ पुर, (उत्तर प्रदेश)

इल्तमास (निवेदन)

मैंने उन रहानी राजों को जो अब तक सीना ब सीना चले आते थे अल्फ़ाज़ में बांध कर किताब की शक्ल में लाने की कोशिश की है। मगर चूँकि यह मामलात अनुभव से ताल्लुक रखते हैं जो नेचर के मुताले (अध्ययन) पर मुनहसिर हैं और जिनका इन्केशाफ़ (ज्ञान) बज़रिये vibration होता है लेहाज़ा इनका इज़हार अल्फ़ाज़ में न सिर्फ़ मुश्किल बल्कि बसाओकात (बहुधा) ग़ैर मुमकिन हो जाता है —

मुहब्बत मानी व अल्फ़ाज़ में लाई नहीं जाती।

यही ऐसी हकीकत है जो समझाई नहीं जाती ॥

इस लेहाज़ से मुनासिब है कि अल्फ़ाज़ की तरतीब (क्रम) और इबारात की बन्दिश (प्रतिबन्ध) की खामियों को नज़र अन्दाज़ करते हुए शायकीन अस्ल मफ़हूम (आत्मा को) समझने की कोशिश करें और उससे खूद मस्तफ़ौज़ (लाभान्वित) होकर दूसरों को फ़ायदा पहुँचाने के कोशिशें हों ॥

मुसन्निफ़

मोरेखे (दिनाङ्क) = दिसम्बर सन् १९४६ ई०

उसूल नम्बर-१

सुबह सूरज निकलने से पहले हर एक भाई उठे और सन्ध्या उपासना हत्तुलवसा (यथासंभव) सूरज निकलने से पहले मुक़र्रर (निश्चित) वक्त पर ख़त्म कर दे। पूजा के लिये एक अलहदा जगह और आसन मुक़र्रर कर ले। जहाँ तक हो सके एक ही आसन से बैठने की आदत डाले। जिस्मानी और मानसिक पाकीजगी का ख़ास ध्यान रखे।

कुदरत की आग जो रोज़े-अज़ल (सृष्टि के आरंभ) से जली है अब तक ठण्डी नहीं हुई है। जब श्रृष्टि की पैदाइश का वक्त आया ख़याल ने हरकत की। अजज़ा (परमाणुओं) में गर्मी पैदा हो गई। गोया पहला ग़िलाफ़ रोज़े-अज़ल से चढ़ गया। इस आँच ने ज़रत को गरम कर करके हरकत देना शुरू कर दी। यह हिद्दत (गरमी) बढ़ती ही गई। ग़िलाफ़ दर ग़िलाफ़ चढ़ते ही गये। ठोसता बढ़ती ही गई। तज़लज़ुल (कम्पन) पैदा ही होता गया। सब ने अपना-अपना फ़ेल शुरू कर दिया और फिर उसमें भी फ़ेल हुआ ही किये। नतीजा यह हुआ कि उसने अपने ऊपर, दूसरे अल्फ़ाज़ में, रेशम के कीड़े की तरह ग़िलाफ़ बना लिया। अण्डे की सफ़ेदी भलकने लगी। अस्तियत अन्दर

छिप गई। जड़बा (लगाव) पैदा होता गया। अब जिसको उससे ज्यादा लगाव या मुहब्बत थी उसके हिस्से में यह चीज ज्यादा आई और वही गर्मी जो रोज-अजल में थी इन्सान में नमोदार (प्रकट) हुई। यह गर्मी कितनी आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ी और पक पकाकर नमूद (स्थूल) की शकल बन गई। हर ज़रूर पर उसका असर पड़ा और उसने उसमें हिस्सा लिया। यह चीज ज़मीनी थी जो उसमें शामिल हो गई। यह हमेशा उस चीज के ताबे (अधीन) रही जिसका हिस्सा उसमें शामिल है। या वह बड़ी तह जो गर्मी से बन चुकी है वह अपनी निस्वत उससे ज्यादा रखेगी। अब जो असरात इस बड़ी चीज पर पड़ेंगे उसका अक्स छोटी चीज में नमोदार होगा। अगर खारजी (बाहरी) असर बड़ी चीज पर पड़ता है तो जसामत (शरीर के अनुरूप) के लेहाज़ से उस छोटी चीज पर भी पड़ेगा। इन चीजों पर असरात बेरुनी (बाहरी) भी हुआ करते हैं। शोआओ" (सूर्य किरणों) का असर छोटी बड़ी सब चीजों पर होता है। दोनों के काम बलेहाज़ जसामत करीब-करीब एक ही हो जाते हैं। गर्मी जो खार्जी असरात से पैदा हो जाती है वह निकलना भी शुरू हो जाती है और चैन उस वक़्त मिलता है जब यह गर्मी शान्त हो जाती है। इसकी मिसाल मौसमे गर्मी हो सकती है। यह खार्जी असरात जिनको बलेहाज़ जसामत हटने में वक़्त लगता है अगर दूर हो गये तो कुछ चैन व सकून (शान्ति) ज़रूर आ जाता है। अब यह समय महात्माओं ने उस वक़्त माना है जबकि खार्जी असरात उस पर से हटना शुरू हो जाते हैं। गोया यह गरमी के खात्मा का वक़्त होता है और गरमी खत्म होते ही ठण्डे असरात आने लगते हैं। इन दोनों के मेल को सन्धिगति कहते हैं। महात्माओं ने इस सन्धिगति में पूजा और उपासना करना फ़र्ज़ रखा है। इस वक़्त उस चीज के आने का वक़्त होता है जो गरमी से मु़ख़्तलिफ़ है। और वह चीज क्या हो सकती है? और यह वही चीज हो सकती है जो अजल में गरमी के पैदा होने से पहले थी।

समझिये तो सही । कैसा अच्छा वक्त कुदरत से मुताबकत (मेल) रखता हुआ सोच समझकर मुकर्रर किया गया है । यानी यह वह वक्त है जो कि उस हालत से मिलता जुलता है या यूँ कहो कि उस हालत की ठोस अवस्था है जिस पर कि हमको पहुँचना है । एक बात और कहूँगा । यह बात असल की नक़ल है । गोया यह नुक्ता (बिन्दु) है जिससे हमको आगे बढ़ने का मौका मिलेगा और यह नुक्ता कैसा अच्छा फ़र्ज़ किया गया है जो उस हालत से मिलता जुलता है जिस पर हमको पहुँचना है ।

तम (दोपहर) की सन्ध्या पर भी जोर ज़रूर दिया गया है । मगर इस ताक़त का इस्तेमाल दूसरे तरीक़ा में किया गया है । आफ़ताब की शोआएँ उस वक्त बराह रास्त (सीधी) होती हैं और गरमी ज्यादा पैदा करती हैं । यह गरमी भी उसमें चिपकी होती है और उसी से आई है जो हर चीज़ का मम्बा (श्रोत) है । अब हम असल ताक़त से जो गरमी द्वाग़ (ज़रिया) उस वक्त मौजूद होती है चिपक जाते हैं । गोया उस ताक़त से हम करीब हो जाते हैं और यह बात उस वक्त तक क़ायम रहती है जब तक इस गरमी के शान्त होने का वक्त आ जाता है । गोया हमने उससे भी फ़ायदा उठाया और इस तरीक़े से हम इसके करीबतर हो गये । अब वह वक्त आ रहा है कि हम उसके करीबतर पहुँचकर रफ़ूता-रफ़ूता उस हालत का मज़ा चखेंगे जो उससे कुछ हटकर है । हम करीबतर हो गये और अब करीबतरीन हालत में जा रहे हैं जो वक्त इसके बाद आ रहा है । इस अमल ने हमको उसमें पहुँचने में मदद दी । इसलिये महात्माओं ने दोपहर की सन्ध्या भी बतलाई है । वजह यह है कि आफ़ताब की शोआएँ असर डालते-डालते अपना सिलसिला उस हिस्से से क़ायम कर लेती हैं जिस जगह से कि शोआयें आ रही हैं और जो इसके बाद वाली हालत है । यह शोआयें चूँकि दोपहर को सीधी पड़ती हैं लेहाज़ा करीब तरीन

होने की वजह से वह असर भी उनके द्वारा सीधा आता है। गरमी जो आफ़ताब से आई हुई मालूम होती है यह वाकई ज़रत की गरमी है। अब अगर हम दोपहर को बैठकर ख्याल बाँधें तो नादानिस्ता (बग़ैर जाने) तौर पर हमारा ख्याल मर्कज़ या अस्ल मक़सूद (ध्येय) की तरफ़ खिंचने लगता है। इसको यों समझिये कि अकसर किसी मसले को हल करने के लिये हम ज़बाब पहले फ़र्ज़ (कल्पना) कर लेते हैं। इसी तरह इन्सानो ज़िन्दगी के मसले को हल करने के लिये भी हमको वह अस्ल चीज़ पहले फ़र्ज़ कर लेना पड़ती है ख़्वाह उसकी शक्ल हमारे ख्याल में कितनी ही धुँधली क्यों न आये क्योंकि किसी चीज़ की इन्तहाई (आखिरी) हालत पर पहुँचने पर उसकी पीछे वाली चीज़ का बोध नहीं रहता। इसलिए इस इन्तहाई हिद्दत से हमने अपना काम निकाला है। और चूँकि ज़रत की यानी माही (द्रव्यीय) गरमी भी इस वक़्त ज्यादा होती है इसलिए दोपहर की सन्ध्या की पाबन्दी हम अपने यहां लाज़मी करार नहीं देते।

दोपहर की सन्ध्या ख़त्म होते-होते फिर शाम का वक़्त आ जाता है। उस वक़्त तक गरमी किसी हद तक शान्त हो चुकी थी। गोया उस ठण्ड के आप करीब हो चुके थे। अब जितना वक़्त गुज़रता गया ठण्ड के करीब होते चले गये। आखिर को वह नुक्ता आ गया कि जब हम उसके करीबतर हो गये, और, यह सुबह का वक़्त था। इस वक़्त आफ़ताब की गरमी किसी तरह से अपना दख़ल (उपस्थिति) नहीं किये हुए थी। यह सायन्स का मसला है और इसी लेहाज़ से इन वक़्तों की तक़सीम बलेहाज़ गरमी सरदी के होती है।

यहाँ पर एक सवाल यह पैदा होता है कि सत और तम के समय त्रिकाल सन्ध्या, मुकर्रर की गई रज के वक़्त क्यों नहीं की गई? गुलिलबन आप तनासिव (संबन्ध) के मसले इन्वर्टेण्डो (Invertendo) से वाकिफ़ होंगे। दोनों सिरे यानी इक़तदा (आरम्भ) और इन्तहा

(अन्त) लिये गये हैं। इब्तदा सत है और इन्तहा तम। इसको उलट दो। इन्तहा, इब्तदा हो जायगी और इब्तदा इन्तहा। दरमियानी चीज कुछ भी नहीं है वजुज (सिवाय) एक फ़ज्रों लकीर के जो दोनों सिरों को मिलाती है।

आज मैं वह फ़िलस्फ़ा खोल रहा हूँ जिससे कि लोग कम आशना (जानकारी) हैं। आमतौर पर लोग सत ही को अस्ल तस्सव्वर (समझते) करते हैं। और ईश्वर को जानने का यही पैमाना बना रक्खा है लेकिन उसके पसेपुशत (पीछे) जो राज है उसे नहीं जानते। वह ख़ास चीज जो इसके तह में है उन पर अब तक मुनकशिफ़ (प्रकट) नहीं हुई। यह सब तम और सिफ़ तम ही की कैफ़ियात (हालत) है। योगियों को हासिल करने के लिये यही ख़ास चीज है। इस नुक़ता तक पहुँचना बहुत दुश्वार है। सत का हासिल करना नेहायत आसान है। लेकिन, वह हालत जिसको मैंने तम के नाम से मौसूम (लिया) किया है इतनी जल्दी हासिल नहीं की जा सकती। इसके बाद कुछ नहीं है। अमूमन लोग बातें तो बहुत करते हैं मगर चीज़ों की तह तक कोई नहीं जाता। सफ़ाई, सादगी और सकून भी इसके पीछे नहीं है। यानी वह इन सब से परे है। यही वह चीज़ है जो आपको बरसों की मेहनत और बेशुमार जन्मों के बाद हासिल होती है। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि दुनियाँ के बड़े-बड़े फ़ुकरा इस नज़ारह (दृश्य) से जैसा कि मैंने ऊपर बयान किया है पीछे रहे। नफ़ी (शून्यता) की हालत जिसके आप मुतलाशी (तलाश) हैं और जो बाक़ई ज़िन्दगी है इसी में है। और जुमला हरकात इस नुक़ते पर पहुँचने से पेश्तर ख़तम हो जाते हैं। यह कुदरत का राज है जो मैं आज खोल रहा हूँ। ईश्वर या ज़ात की कैफ़ियत का महोर (केन्द्र) कुल्लियतन (सम्पूर्ण) यही नुक़ता है। लोगों ने मुद्तों ज़िस्तजू (प्रयत्न) की और ढूँढते रहे मगर हमेशा इस अस्ल कैफ़ियत से पीछे ही रहे।

यहाँ इदराक (इन्द्रियों) का गुजर नहीं। लोग तम की इस कैफ़ियत को अपना जानी दुश्मन समझते हैं। लेकिन क्या आपने कभी किसी ऐसे सीधे सादे शरूस को देखा है जिसकी निस्वत इस जहालत (अज्ञान) से हो और जिसमें यह कैफ़ियत पूरे तौर से मौजूद हो ? उसकी कैफ़ियत क्या होती है ? जबकि वह तरक्की करते-करते इस हालत पर जिसको कमाल कहते हैं पहुँच जाता है तो फिर वह अपनी हालत का इज़हार नहीं कर सकता। ठीक उसी तरह जैसे कि एक नासमझ बच्चा अपनी कैफ़ियत खुद बयान नहीं कर सकता। लेकिन अगर कहीं सत का हल्का छीटा इसमें दे दिया जाय तो उसको अपनी तम की कैफ़ियत का अन्दाज़ होने लगेगा। ऐसा क्यों है ? इसलिए कि दोनों के मिलने का जो नुक़्ता है वह एक नई चीज़ पैदा कर देता है जो वही है जो पैदायशे आलम की बुनियाद है। अब फिर वही मसला उलट फेर (Invertendo) का आ जाता है जैसा कि मैं ऊपर जिक्र कर चुका हूँ।

साने हक्कीकी (निर्माणकर्ता) की तीसरी कैफ़ियत कुदरत का आरा-यशी (व्यक्त जगत) नज़ारा है। लोग दर हक्कीकत इसी में मसरूफ़ (व्यस्त) रहते हैं और तबीयत को इधर-उधर भटका कर ख़्वाहिशात का अम्बार जमा करते रहते हैं। आपकी नज़र सब से पहले चमकीली चीज़ पर पड़ती है जिसको कि आप सत कहते हैं। यह चमकीली चीज़ सिवाय माया के और कुछ नहीं है। लोग इसी के बारे में बढ़-बढ़ कर बातें मारते हैं जो कि दरहक्कीकत अभी अस्तियत और रुहानियत के दायरे से कोसों दूर है। लोगों ने अपनी ऐसी गुंग अवस्था बनाई है कि न वह इसको सुनना चाहते हैं और न इसके एहसास की कोशिश करते हैं। उन्होंने वह असल चीज़ जिसके आगे न रोशनी है और न अंधेरा गुम कर दी है। यही वह चीज़ है जो मैंने अपने मिशन के निशान (Emblem) में दिखाई है। इन्सानी उरुज (उन्नति) की असल

कैफ़ियत यही है। और यहाँ से नीचे गिराव का इमकान (संभव) बाक़ी नहीं रहता। फ़िलस्फ़ा बहुत दक्कीक़ (जटिल) है। महात्माओं ने इस हालत को जहाँ पर न रोशनी है न अंधेरा सत्यपद के नाम से मौसूम किया है। लेकिन उनका यह ख़याल सही नहीं है। वह चीज़ इससे भी आगे है। यह महज़ उस अस्ल का परतो या अक्स है। वाक़ई हकीक़त इसके बाद है।

लोगों को यह बातें जानकर वाक़ई ताज्जुब होगा। मगर मैंने यह मज़मून उन लोगों के लिये लिखा है जो रूहानियत में बख़ूबी तरक्की किये हुए हैं और इस सायन्स से अच्छी तरह वाकिफ़ हैं जिसका ज़िक्र कर रहा हूँ। इसको सिर्फ़ अनुभव या क़शफ़ ही बता सकता है। यह चीज़ मज़हबी क़यूद (नियमों) में पाई नहीं जाती। इसका रास्ता जुदा-गाना है। यह इल्म बज़ात ख़ुद एक सायन्स है। और जब तक कोई शरूस अपने आपको इस क़ाबिल न बना ले कि क़ुदरत का मुशाहिदा (देखना) अपनी अन्दरूनी आँख से करे तब तक उसका अहल (पात्र) नहीं हो सकता। और उस वक़्त तक उसकी रसाई (पहुँच) उसके आसतां (चौखट) तक भी नहीं हो सकती समझना तो दरकिनार। मज़हब आपको सिर्फ़ इसके समझने में मदद दे सकता है कि क़ुदरत में मुशाहिदा के लिये कुछ और भी है लेकिन जवाहरात चुनने के लिये आपको ख़ुद अन्दर घुसना पड़ेगा। दरअसल हकीक़त की सादगी, सफ़ाई और मासूमियत ही ख़ुद उसका नक्राब (पर्दा) बन गई है। यह किताब इल्म रूहानी के मुब्तदी (आरंभ करने वाले) के लिये नहीं लिखी गई है बल्कि मुन्तही (समाप्त करने वाले) के लिये जो कि दरियाय मारफ़त में काफ़ी तैर चुका हो।

सूरज निकलने के पहले सन्ध्या का समाप्त करना यूँ कहा गया है कि वह गरमी जो जिस्म से रुख़सत हो चुकी है या वह ख़ारिजी

असरात जो जाया हो चुके हैं धूप के असर से फिर न पैदा हो जाय और वक्त से हम इतना अच्छा फायदा न उठा सकें। महात्माओं ने इस बात पर जोर दिया है और मगरबी (पश्चिमी) तहजीब ने भी इस बात को साबित कर दिया है कि हर काम के लिये एक खास जगह मुकर्रर होना चाहिये ताकि वहां पर पहुँचने से वही ख्यालात दौरा करने लगे जो उस काम के लिये मखसूस हैं। ताक़त इन्सान में है और वह ताक़त उसको ख्याली अटकाव से जिसका ताल्लुक अस्ल चीज़ से है मिली है। जब हम किसी काम के करने की नियत बांधते हैं तो वह रस्सी-लगाव या तनाव जो इन दोनों चीज़ों के दरमियान में है गहरा सम्बन्ध कायम कर लेता है। गोया हम अपने ख्याल के मुताबिक अस्ल से ताक़त घसीटने लगते हैं। जब ताक़त घसिटती है और हम उसको किसी खास वक्त से निस्बत देकर मज़ाबलत (प्राप्त) कर लेते हैं तो उस वक्त अपने कामों की याद आ जाती है। इसलिए अगर हम सन्ध्या के लिये एक वक्त मुकर्रर करते हैं तो हमारा ख्याल उस तरफ़ सीधा होने लगता है, और हम किसी न किसी शकल में उसकी याद में खुद बख़ुद मशगूल हो जाते हैं। जो कमरा या जगह हमने इस काम के लिए मुकर्रर की है उसमें बैठकर हम सन्ध्या करते हैं और अपने ख्याल की बिजली बहुत कुछ उसमें गिरा देते हैं जिससे उस मुक़ाम पर पवित्रता का एहसास होने लगता है और वह जगह वही असरात ले लेती है। इसलिये हमको उस काम में मदद मिलती है। इसका यानी पवित्रता का असर उस जगह पर ही मुहीत (सीमित) नहीं रहता बल्कि फैलने लगता है। अब यह अपने क़ुवत पर है कि जिस क़दर उसको फैला सके। देखा गया है और इबादतगाह (पूजाघर) शाहिद (गवाह) हैं कि बरसें गुज़र गईं उसका असर अक्सर मुक़ामात पर अब तक ख़त्म नहीं हुआ। यहाँ तक कि जाने वाले और ज़्यारत (यात्रा) करनेवाले भी मोअस्सर (प्रभावित) हो जाते हैं। यही नहीं बल्कि हवा का गुज़र चूँकि होता रहता है वह उसकी महक

अपने में शामिल करती रहती है और उन तहों को पहुँचाती रहती है जो इससे बाबस्ता (बंधे) हैं और हर तह में बढ़ाव और सिमटाव होता रहता है। इस तरकीब से वह चीज जो अन्दर दाखिल हुई है बढ़ती रहती और अपना असर फैलाती रहती है।

अब सुनिये आसन के बारे में। यह योग के अंगों में से एक अंग है। महात्माओं ने इस पर बहुत जोर दिया है और यह पहली सीढ़ी योग की है। इसकी तह में जो राज है आज तक जाहिर नहीं किया गया। समय पर हर बात खुलती है। वक्त पर हर चीज पर रोशनी पहुँचती है। पैदायशे आलम से पहले हर चीज करीब-करीब साकिन (शान्त) हालत में थी और अपने अस्ल में शामिल हो चुकी थी। बावजूद कि यह चीजें अपने अस्ल में शामिल हो चुकी थीं और अपनी हालत करीब-करीब खो चुकी थीं फिर भी उनके असरात बाक़ी रह गये थे जो इस वजह से कि अस्लियत का परतो (परछाई) उन पर काफ़ी देर तक रह चुका था और उस वक्त तक रहा जब तक कि प्रलय नहीं हो गई मौजूद रहे और उस वक्त तक यानी कायनात (सृष्टि) के फैलाव और क्रयाम (ठहराव) के वक्त तक मौजूद रहे। इस बात का अन्दाज़ा ख़याल नहीं लगा सकता कि यह चीजें कितने असें तक अस्ल के परतो के ज़ेर असर रहीं। यह कम से कम उस असें तक ज़रूर रहा होगा जितने असें तक बराबर अस्ल चीज का उन्होंने असर लिया है। ख़याल फ़रमाइये कितने असें तक बराबर अधिया (वस्तु) जो ज़हूर तरतीब (सृष्टि विन्यास) में मददगार हुई है असर लेते रहे हैं। यह ज़रूर है कि उन्होंने अपनी ठोसता खो दी थी मगर असर ज़रूर था और वह मय उस असर के उसमें शामिल हो गई। असर क्या था जो उन्होंने लिया? वह हरकत थी जो बड़ी ताक़त के झटकों से उसमें पैदा हुई। यह चीज वहाँ पर रहकर असर से पुर (पूर्ण) होने के बायस (कारण) धीमे-धीमे हरकत करती रही। इस कुल ताक़त में क़ुदरत से किसी न

किसी शक्ल में वह तहरीक (गति) जो दिखाई नहीं पड़ती बल्कि मुश्किल से एहसास में आती है कायम रही। गोया खिचड़ी पकती रही और, यह बात मुद्दत मदीद (दीर्घकाल) तक जारी रही। इसको ज्ञात (भूमा) में मखफ़ी (गुप्त) हरकत होना कहा गया है। यह बात मुत-बातिर जारी रही हत्ताकि (यहाँ तक कि) फिर पैदायशे आलम (सृष्टि) का वक़्त आ गया। अब यह वक़्त क्यों आ गया? क्या ज़रूरत थी? क्या वजह थी? इन्हीं मखफ़ी हरकतों ने जो महज़ ताक़त ही ताक़त थी निकलने के लिये शिगाफ़ (दराज़) बना दिये और अज़ सरे नौ (पुनः) वह ताक़त रवां होने लगी। होते-होते नौबत यहाँ तक पहुँची कि उनकी तरतीब (क्रम) ने फिर तरतीबे कायनात (सृष्टि-रचना) शुरू कर दी। इन्सान बनने लगा। उसको अपने अस्ल में पहुँचने की जिस्तजू (जिज्ञासा) होने लगी। और यह बात उसमें यूँ पैदा हुई कि वह जौहर (शक्ति) जिसका जुज़व (अंश) उसमें मौजूद था बवजह ताक़तवर होने के उसको अपनी तरफ़ कशिश करने लगा। और वह चीज़ जो मुत-हरिक (गतिवान) होकर ज़हूरे तरतीब का बायस हुई है इन्सान में भी आई और यह चीज़ साकित (स्थिर) हालत के ख़िलाफ़ थी क्योंकि इसकी बिना (जड़) हरकत थी। अब इस साकित हालत में जाने का ख़्याल पैदा हुआ। लाज़िम आया कि जो हरकत कि इन्सान में पैदा हो चुका है उसको जहाँ तक हो सके मखफ़ी हालत में लाना चाहिये। इसके लिये तरकीबें ढूढ़ने लगा। समझ में आ गया कि जैसी मखफ़ी हरकत एक तरीक़े से बमुकाबले ज्ञात के ठोसता की हालत में थी जिसका लगाव अपने अस्ल से था इसी तरीक़े से हमको कोई बात ठोसता की लेना चाहिये ताकि हम उद्देश्य पर जो कैफ़ियत ज्ञात और अस्ल की है पहुँच सकें। यह ख़्याल आते ही समझ में आया कि कुछ सिमटाव की सूरत अपने में पैदा करना चाहिये। उसी तरीक़े से जैसे कि प्रलय के वक़्त हुई थी। इन्सान में ज्ञात इस तरीक़े से सरायत (घसी) किये हुए हैं जैसे वह कैफ़ियत जो कुल मण्डल (अगर कुल मण्डल को एक इफ़रादी

(इकाई) शक्ल मान लिया जाय) में पाई जाती है। वही इन्सान में मिलेगी। इस मण्डल में जिसको इफ़रादी शक्ल में कहा है सिमटाव की शक्ल पैदा हो जाने से प्रलय का समां वरपा (छा) हो जाता है। अब अगर इन्सान अपने सिमटाव की सूरत पैदा करे तो उसकी प्रलय का आशाज (आरम्भ) हो जाता है, यानी ठोसता की हालत से वह अस्ल में जस्त (डुबकी) लगाना शुरू कर देता है। अब इन्सान के लिये सिमटाव की शक्ल क्या हो सकती है? वह यह कि अपने फ़ैलाव की शक्ल को जो जिस्म द्वारा है समेट ले, जिस तरह से भी कि सिमिट सके। सिमटाव हमेशा नीचे से शुरू होता है और फिर रफ़ता-रफ़ता ऊपर को बढ़ता जाता है। इसलिए कि उसको ऊपर की तरफ़ जाना है। पस, उस तरफ़ पहुँचने के लिये इन्सान अपना सिमटाव नीचे से शुरू कर तो उसकी शक्ल यही हो जायगी कि पैर और उसके करीब का हिस्सा एक हालत में ले आना पड़ेगा और उसको साकित रखना होगा। इसको वह किसी तरीक़े में कर लेवे। आख़िर शक्ल उसकी आसन की हो जायगी। यह चीज़ लाजमी है इसलिए कि इसने ज्ञात में पहुँचने का रास्ता बना दिया है और यह एक ही तरीक़े का बराबर रहना चाहिये। अब यह सवाल है कि एक ही आसन से बैठना क्यों ज़रूरी है? बात यह है कि जिस वक़्त इसका इरादा ज्ञात में जाने का हुआ तो इस मख़सूस (सर्वप्रसुख) चीज़ के हासिल करने के लिये जो बात कि उसने शुरू में ली थी उसका ताल्लुक उस बड़ी चीज़ से गोया उसने कर लिया। लेहाज़ा यह चीज़ जिसका ताल्लुक अस्ल चीज़ से पैदा किया है ज्यादा मददगार होगी। दूसरे मानों में यहाँ पर इब्तदाई संस्कार (initiation) का मसला भी सिद्ध होता है।

एक आसन पर सीधे बैठकर सन्ध्या करना उस वजह से और भी जमाने क़दीम से उसूलन बेहतर माना गया है कि ज्ञात की धारें जो उस वक़्त जिज्ञासु को फ़ैज़ पहुँचाती हैं सीधी गिरती हैं और

और इन्हीं धारों में मुकम्मल फ्रैज को कुव्वत होती है। अगर जिज्ञासु तिरछा बैठे या बार-बार अपना आसन बदले तो लाजमी है कि उन सीधी धारों और उनके असल फ्रैज में गड़बड़ी पैदा हो जाय और सन्ध्या का जो वाकई जज्ब (तल्लीनता) और लुत्फ जिज्ञासु को एक आसन पर सीधे बैठने से मिल सकता है उसको मयस्सर न हो सके। रूहानी फ्रैज को कायदे से हासिल करने के लिए हमको भी कायदा में बैठना चाहिये वरना मुमकिन है कि असल फ्रैज से हम महरूम रहें। मुमकिन है कि लोगों का ख्याल ऐसा भी हो कि सीधे आसन पर बैठकर ध्यान करने में कुछ झलक अहंकार की रहती है। ऐसा नहीं है। उसूलन बन्दे को मालिकेकुल के सामने इस तरह पर रहना चाहिये जैसे कि एक सिपाही आमतौर पर अपने अफसर के सामने परेड पर देखने में आता है। अफसर के आते ही अटेन्शन (Attention) की आवाज दी जाती है। उस वक्त सिपाही का फर्ज होता है कि सारे जिस्म को सीधा एक हालत में रखे और बराबर अपने अफसर की जानिब यकसुई (निरन्तर) से देखता रहे। इससे जिस्म की फुर्ती-सेहत और ताजगी का इजहार होता है। ईश्वर के सामने बैठने में भी बन्दे का यही फर्ज है।

पवित्रता का मस्ला खास कर हिन्दुओं में बहुत आला पैमाने पर रखा गया है। इसकी बिगड़ी हुई शक्ल अब यह हो गई है कि सिर्फ ख्याल ही ख्याल बाक्री रह गया है। क़वायद सब भूल गये। सिर्फ नहाना याद रह गया। इसकी बुनियाद इस तरह पर पड़ी कि लोगों को ख्याल पैदा हुआ कि वह पाक और लाजवाल (अबिनाशी) हस्ती जिसमें हमको जाना है हर चीज से मुबर्रा (पृथक्) और मनज्जा (अलग) है। उसमें पाकीजगी ही पाकीजगी है। गोया हमने अपना पाकीजगी का-म्यार (आदर्श) कायम कर लिया है। वह पाकीजगी कैसी जो मल, विक्षेप और आवरण से पाक है? हमारी हस्ती में यह तीनों बातें मौजूद

हैं। जहाँ पर पाकीजगी होगी वह चीज इन तीनों चीजों से मुबर्क होगी। हमारा ख्याल इस दर्जे की पाकीजगी की तरफ राग़िब (आकर्षित) हुआ। जाहिरा सामान से उसकी नक़ल उतारने लगे। यानी जिसम को मलने और साफ़ करने लगे। गन्दे मुक़ामात की सफ़ाई का खास ख्याल रखा। फिर क्या हुआ कि वह पाकीजगी जिसको हमने अपना मयार माना है हमारे जाहिरा तरीक़ों से मन पर असर डालने लगी। बढ़ते-बढ़ते यह नौबत आई कि उसमें भी शुद्धता दौड़ने लगी। यह बात हमारी मुतवातिर असें तक जागी रही और साथ ही साथ हमारे नुक्ते निगाह में वह मयार भी क़ायम रहा जिसने उस पाकीजगी को दोबाला (दुगना) कर दिया। एक तो हमारे कर्म मन की शुद्धी के लिये राग़िब थे। दूसरे, इस मक़सद ने सोने पर सुहागा का काम किया। अब क्या था? पवित्रता दौड़ने लगी। मन शुद्ध होने लगा। ख्यालात अच्छे पैदा होने लगे और यह सब हमारे अस्ल मक़सद हासिल करने में मददगार हुए। हमको दोनों तरफ़ से फ़ायदा पहुँचा। बातिनी (अन्दरूनी) दौड़ हम लगा चुके थे। जाहिरी दौड़ से भी हमको इस काम में मदद मिली। गोया दोनों चीज़ें मक़सद के हासिल करने में मददगार हुईं। जब इन दोनों चीज़ों ने एक दूसरे से हम आहन्गी (एकता) हासिल कर ली तो क्या हुआ कि यह सब मिल मिलाकर बजाते खुद एक ताक़त बन गई। इस ताक़त ने हमारा रास्ता और भी सीधा कर दिया। फिर क्या था? दोनों बाजुओं से हम पैर फैलाकर उड़ने लगे, और, हर चीज़ शुद्ध होने लगी। देखिये इस पवित्रता ने हमको मक़सद हासिल करने में कितनी मदद दी।

हमने अपने नियमों में सन्ध्या और उपासना का सब से अव्वल नियम रखा है। इसकी वजह यह है कि हम ऐसा करने से उस ताक़त को हासिल कर रहे हैं जिस पर कि हमको कुदरतन किसी वक़्त आना है। इसके मुतल्लिक एक बात और बताता हूँ। वह यह कि जब धारें

जात से रवां हुई तो उन्हीं की रवाना ने मथ-मथाकर ठोसता की हालत पैदा कर दी। अणु-परमाणु और मुस्तलिफ़ शक्ल के ज़रत बन-कर तैयार हो गये और इन का इज़हार अपनी-अपनी शक्ल में होने लगा। वह चीज़ इनमें रवां रही जिससे गर्मी भी पैदा हुई जिस पर कि ज़िन्दगी का दारोमदार है। इस सूरत में मुस्तलिफ़ शक्लें ज़हूर (प्रकाश) में आ गईं और मुस्तलिफ़ काम होना शुरू हो गये। गर्मी बाक़ी रही और यह अब तक क़ायम है। इसका ज़ोर नीचे की तरफ़ ज़रूर हो गया। लोग सवाल करेंगे कि यह ऊपर नीचे का ख़्याल क्या? जिस वक़्त हम सब से ऊँची चीज़ का तस्सुवर (ख़्याल) बांधते हैं तो नीचे का ख़्याल भी क़ायम हो जाता है। अलावा इसके, जब हम बेहतर चीज़ से आये हैं तो इसके बादवाली चीज़ कम बेहतर या नीची कही जावेगी। और इस वजह से हम उस चीज़ को सब से बड़ा और ऊँचा तस्सुवर करते हैं यानी बुलन्दी और पस्ती (निचाई) हमारे ज़ेहन में फ़ौरन दाख़िल हो जाती है। मगर जिस वक़्त नीचे का ज़ोर घटता है तो वही चीज़ जो परमाणु पर गर्मी डाल रही है, और यह काम उसका बराबर जारी है, ज़रत को ऊपर की तरफ़ मुखातिब करने में मददगार होती है। यानी जहाँ पर से यह चीज़ नुमायां (प्रकट) हुई है और उसी हरकत से जो इसमें गर्मी पैदा होती है उसको हल्का कर देती है। हल्की चीज़ का यह ख़ास्सा (स्वभाव) है कि वह हमेशा ऊपर को उठती है। उसका ऊपर आना यह मतलब रखता है कि वह उस तरफ़ को जाना चाहती है जहाँ कि उसका मम्बा (श्रोत) है। अब यह चीज़ जिसमें धारों के असरात से काफ़ी तहरीक (गति) पैदा हो गई है अपने अस्ल की तरफ़ उड़ना चाहती है। यह चीज़ इन्सान के हिस्से में ज्यादातर आई है। इसलिए जब नीचे की रस्सी कट जाती है यानी नीचे का रुम्मान (भुकाव) बन्द हो जाता है तो अज़ख़ुद (स्वयं) इन्सान के दिल में परवाज़गी (ऊपर उड़ना) और अपने अस्ल में पहुँचने का ख़्याल नमूद (दृष्टिगोचर) कर जाता है। यही वजह है कि संध्या उपा-

सना करने को जी चाहने लगता है। इस गर्मी और उस गर्मी में जो सूरज के असर से पैदा होती है बड़ा फ़र्क है। उस गर्मी (सूरजवाली) का आगाज़ फिर भी बमुक़ाबिले इसके मादियत (द्रव्यता) से होता है और इससे भारी होती है। इसका आगाज़ असल ही से है जिसमें मादियत नहीं। मेरे ख़याल में अगर इसको जोर कह लिया जावे तो तरजुमा ज़्यादा मौजूं रहेगा। मगर जोर में यह गर्मी छिपी हुई रहती है और आफ़ताब में ज़ाहिर तरीक़ों में। उस गरमी में और इस गर्मी में, जो महज़ कहने मात्र है, ज़मीन व आसमान का फ़र्क है। वह यानी सूरजवाली गरमी महज़ आँच है और यह ज़िन्दगी को बढ़ानेवाली और उसका क़याम रखनेवाली है। अल्फ़ाज़ दोनों जगह एक ही से आये हैं। मगर अफ़सोस यह है कि ऐसी चीज़ जल्दी एहातेबयान (बायन के दायरे) में नहीं आती। जहाँ तक हो सका ख़यालात को अल्फ़ाज़ में बाँध दिया गया है मगर इसका फ़र्क अनुभव पर मुनहसिर है यानी इस गरमी और उस गरमी का फ़र्क।

हमारे तरीक़े में सब से पहले यही किया जाता है कि अभ्यासी का नीचे की तरफ़ जो रूझान हो रहा है तालीम कुनिन्दा (शिक्षक) अपने असर से कमज़ोर कर देता है ताकि एजज़ा उस तरफ़ यानी ईश्वर की तरफ़ अज़ाख़ुद मायल (ध्यान) होने लगे। यह हालत मन के ऊँचे तबके की है और वह हालत यानी नीचे की तरफ़ रूझान होना मन के नीचे तबके की। यह फ़िलस्फ़ा है तालीम का और बुनियाद भी। यह चीज़ जो मैंने यहाँ बयान की है बड़े-बड़े फ़िलासफ़रों को सोचने और ग़ौर करने का मौक़ा देगी। मज़मून मुस्तसिर लिखा गया है। इस सिलसिले में एक बात और ज़िक्र कर देना ज़रूरी समझता हूँ। वह यह कि एक मौक़े पर किसी बुजुर्ग ने फ़रमाया है कि ईश्वर ने बन्दे का दरवाज़ा जिससे हर "क्यों" (प्रश्न) का ज़वाब उसे मिल सके बन्द कर दिया है। वह दरवाज़ा क्या है? सोचने से पता चलता

है, वह परदा क्या है जानने से ताल्लुक रखता है। एक शायर ने भी कहा है।

तवाँ दर बलागत बसहबाँ रसीद ।

नदरकुनह बेचूँ बसुजाँ रसीद ॥^१

अब इस परदे के बारे में सुनिए। वह क्या चीज़ है जो उसके अस्ल राज जानने में हारिज़ (रोक) हो रही है। जिस वक़्त हम ईश्वर का ख़याल बांधते हैं तो हमारी समझ एक दायरा बना लेती है और एक तरीक़े का दर (दरवाज़ा) कायम कर देती है। बस यही बन्द (दायरा) है जो “क्यों” का जवाब नहीं देने देता। अब हम अगर कहीं इस ख़याल से बाज़ आ जायें और वह अहाता हमारे ख़याल से कहीं दूर हो जाये तो हम बारीक से बारीक बात मालूम कर सकते हैं। मगर इस दायरे के बाद एक दायरा और आता है जिसका परतो या अक्स यह दायरा है जो ऊपर बयान किया जा चुका है। जब हम उसमें घुस पड़े तो उस जगह यानी मरकज़ की कैफ़ियत नज़र आ सकती है। मगर इन क़यूद (रुकावटों) का टूटना सिर्फ़ एक हालत में हो सकता है यानी जब हम अपने ज़र्रात को किसी तरीक़े से छिन्न-भिन्न कर सकें। मगर यह ताक़त अम्नेमुहाल (कठिन कार्य) है, इसलिये कि उन क़बायद की पाबन्दी जो इसके लिये लाज़मी है, नहीं हो सकती। अगर कोई शख्स ऐसा पैदा हो जाय जो अपने कूबते इरादी और इच्छा शक्ति से इन ज़र्रात को छिन्न-भिन्न कर सके तो बाक़ई वह दायरा निगाह से हट जावेगा। इसलिए कि निगाह छिन्न-भिन्न हालत

१. कोई भी वक्तूत्व कला और प्रभावशाली व्याख्यानों में सहबन (चीन का एक दार्शनिक) की प्रज्ञा को प्राप्त कर सकता है परन्तु हर कोई परम पावन परमेश्वर के ज्ञान को प्राप्त करने की क्षमता नहीं रखता।

में उसके साथ हो चुकी है । मगर इसका इल्म या ज्ञान लाने के लिये यह बात भी जरूरी है कि वही निस्वत रखते हुए उन एजजा को फिर इकट्ठा करके जिस्म की तरतीब उसी तरीके से कर लें जो जर्गति के छिन्न-भिन्न करने से पहले थी । अवाम की निगाह में ऐसा शख्स मुमकिन है कि न पैदा हुआ हो । मगर मेरा अनुभव शाहिद (गवाह) है कि चंद ऐसी हस्तियाँ जरूर गुजर चुकी हैं । जिस वक़्त जर्गति अलाहदा किये जाते हैं तो वह चीज़ जो बाक़ी रह जाती है उसकी कैफ़ियत मख़फ़ी हरकत की हो जाती है जिसमें उसकी कूव्वतेइरादी (निश्चयात्मक शक्ति) पोशीदा रहती है । जैसे ज़हूर के पहले और प्रलय के बाद जो चीज़ कि पिनहां (गुप्त) थी फिर ज़हूर का बायस हुई । इसी तरह से जो चीज़ कि जर्गति के छिन्न-भिन्न करने के बाद रह जाती है वही फिर जर्गति इकट्ठा करने का बायस होती है और इसमें कोई दर बाक़ी नहीं रहता ।

उसूल नम्बर-२

पूजा प्रार्थना से शुरू की जावे। प्रार्थना आत्मिक उन्नति के लिये होना चाहिये और इस तरह कि हृदय प्रेम से भर आवे।

प्रार्थना बन्दगी (भक्ति) की दलील (द्योतक) है। इससे जाहिर होता है कि हमने रिश्तए-बन्दगी उस जात पाक से कायम कर लिया है। हमने किसी को मालिक माना तो हम उसके बन्द हो गये। बन्दे को बन्दगी से मतलब होता है। भरत जी की मिसाल मुलाहजा हो जिन्होंने सेवाय आक्रा (स्वामी) की परिसतिश (पूजा) और क्रद्र के दूसरी बात को दिल में गुन्जाइश नहीं दी। यह मिसाल है जिसको कि हमें रिश्तए बन्दगी कायम करने के लिए निगाह में रखना चाहिये। यही रिश्तए मुहब्बत कहा जा सकता है। यह वह लड़ी है जो शुरू से आखीर तक सम्बन्ध जोड़ देती है। तार बर्की (बिजली) का उसूल लोगों को मालूम होगा। बिजली का एक हिस्सा एक सिरे पर होता है और उससे आखीर सिरे तक खबर पहुँच जाती है। यही हाल बन्दे का समझना चाहिये कि उसने अपनी ताकत की बिजली से मालिक तक खबर पहुँचा दी है। वह तार जिसका लगाव बन्दे से मालिक तक हुआ है उसमें अपनी इबादत के असरात से वह

हिस्सा जो मालिक के पास है बन्दे के पास आना शुरू हो जाता है । रफ़्ता-रफ़्ता नौबत इस हद तक पहुँचती है कि हर चीज़ मालिक की बन्दे तक पहुँचने लगी है । शुरू में सिर्फ़ बन्दे ने अपनी ख़बर मालिक तक पहुँचाई थी । क्या अच्छी बात है ! बन्दे ने बन्दगी शुरू की, नतीजा यह हुआ कि मालिक ने उससे कुर्बत (समीपता) अख़्तयार करना शुरू कर दी । और बढ़े । ज़यादा गये; हमनशीनी (साथ बैठने) का ख़्याल बन्दे में मौजज़न (पैदा) होने लगा; मुसाहबत (संग) शुरू हो गई; ध्यान नाज़िल (आने) होने लगी; ख़बर पहुँचने लगी; एहक़ाम (आदेश) आने लगे; इव्तदाई संस्कार शुरू हो गया । यहाँ तक तो कर लाये । आगे.....एक राज़ है । जुबाँ खुलती नहीं । सरासर लोग कहते हैं, बन्दगी ने हमको बन्दा बना दिया । मगर यहाँ पर तनासिब (संबंध) का मसला उलट फेर (Invertendo) फिर आ जाता है . जिस किसी ने इस उसूल को लिया कमाल तक पहुँच गया । लोगों की निगाह इस फ़िलास्फी पर पहुँची ही नहीं; न यह राज़ अब तक ज़ाहिर हुआ ।

अब यह बात क्यों कही गई कि प्रार्थना इस तरीक़े में होना चाहिए कि हृदय प्रेम से उमड़ पड़े । मतलब यह है कि हम इस तक अपने में ख़िला (रिक्तता) पैदा कर लें कि उसकी धारें इसमें ख़ूब उतरने लगे । गोया उसके लिये जगह बना लें जिससे कि इतनी कशिश (खिचाव) पैदा हो जाय कि ईश्वरी धार हम पर सीधी गिरने लगे ।

मए^१ वहदत^२ के तालिब^३ दिल भी कर बहरे तलब^४ ख़ाली ।

तही^५ पैमाने^६ पर महफ़िल में सर भुकता है बोटल का ।

रफ़्ता-रफ़्ता इस काम की इतनी मज़ाबलत (अभ्यास) हो जाती है और ऐसी हालत बन जाती है कि आदमी हम्मातन (पूर्णतया) अपने आपको प्रार्थना ही प्रार्थना महसूस करने लगता है । वह हालत कब पैदा

(१) मदिरा (२) आध्यात्मिकता, भगवान (३) ढूँढ़नेवाला (४) इच्छाओं का समुद्र (५) स्थान (६) प्याला ।

होती है ? जबकि ऊपर लिखे हुए कदायद की पूरी मज्जाबलत अभ्यासी कर चुकता है और दयालु शक्ति पूरे तौर से मौजेज्जन (हिलोरे) होने लगती है । जब यह बात आखिर हृद तक पहुंच जाती है, तब आदमी प्रार्थना की हालत में रहने लगता है । दुनियां के काम काज करते हुए भी उस पर वही कैफियत तारी (भरी) रहने लगती है । दुनियां का कोई काम उसके इस काम में विघ्न नहीं डालता है ।

नमो गोयम कि अज दुनियां जुदा बाश ।

बहर कारे कि ख्वाही बा खूदा बाश ॥

अगर किसी शख्स ने ऐसी हालत पैदा कर ली है तो इसका मतलब यह है कि वह प्रार्थना की ही हालत में रहे । हर वक्त खूज (खिचें) रहने का मन्शा यह है कि उसने अपने मालिक को मालिक और अपने आपको बन्दा समझ लिया है । रिश्तेबन्दगी कायम हो चुका है । ईश्वर को ईश्वर समझ चुका है और बन्दगी के असल उसूल पर आ चुका है । क्या यह बात हर शख्स को हासिल हो सकती है ? हाँ; मगर काफ़ी मज्जाबलत के बाद । जिसकी यह हालत हो चुकी है वह प्रार्थना के दायरे में है । उसको अख्तयार है कि अपने मालिक के सामने आजिजी (नम्रता) के साथ जो चाहे सो कहे देवे । हर शख्स को प्रार्थना के वक्त इस शकल में आना पड़ता है । तब ही दुआ मुस्तजाब (स्वीकृत) होती है । यह रिश्ते मुहब्बत है जो अपनी हृद में कायम करके मालिक की हृद तक पहुंचाया गया है । यह वह तार है जो अगर एक दफ़ा जुड़ चुका है तो फिर नहीं टूटता । मन्जिल बहुत दूर है यह सब जानते हैं । मगर ख्याल ऐसी चीज़ है कि इसको आसान कर देता है । प्रीतम की याद प्रेमी को उससे करीबतर कर देती है । इस रिश्ते की हृद नहीं ।

(१) मैं यह नहीं कहता हूँ कि दुनियां से अलग रहो । लेकिन जो काम भी करो ईश्वर के समीप रहो ।

जितनी ज्यादा मुहब्बत या प्रेम पैदा किया जावे उतनी ही उस तरफ तरक्की होती है। यह रिश्ता हम अपने साथ लाये हैं। इसको तरक्की देना हमारा फर्ज है। इसको हमें यहां तक बढ़ाना और तरक्की देना चाहिये कि हम अपने आपको हमेशा उसके करीबतर पावें। प्रार्थना की हालत भक्तों की होती है और भक्ति से ही उसमें मजबूती आती है। यह वह सीढ़ी है जो ज्ञात तक पहुंचा देती है। यही सीढ़ियाँ जाने कितनी जुड़-जुड़कर उस हद तक पहुंचाने में मददगार होती हैं। सब मन्जिलें (यानी मदारिज या दर्जात तरक्की रूहानियत) अर्थात् आध्यात्मिक उन्नति की अवस्थायें इसके अन्दर हैं। प्रार्थना के लिये कोई खास वक्त मुकर्रर नहीं है। जब तबीयत ऐसी बन जाय जैसा कि ऊपर कहा गया है तो प्रार्थना शुरू कर दें और अगर न बने तो बना लें। प्रार्थना हमेशा उस मालिक से करना चाहिए जो वाकई मालिक है और मालिक कहलाने के काबिल है। गुलामों से प्रार्थना करना मैं जायज नहीं समझता। यानी उन शक्तियों से जो इन्सान के मातहत रखी गई हैं, और इन्सान से ही उनको ताकत मिलती है। जमाने के असरात से उनकी हालत मदकूक (असहाय) की सी है। अपने बड़े हाकिम से बजुज खास सूरत के दुनियादारी के मामलात में प्रार्थना करना जेहल (मूर्खता) और नादानी है। प्रार्थना अलबत्ता उस बात के लिये मालिक से करना जायज है जिसके लिये उसका हुक्म हो चुका हो। यह बात कमाल इन्सानी शराफत के अन्दर आती है और इस बात की दलील है कि हम उसको दिल से अपना मालिक समझ रहे हैं, और अपने आपको उसके आधार पर छोड़ दिया है।

अब सवाल यह है कि प्रार्थना का ढंग दूसरों के फायदे के लिये क्या अख्तियार करना चाहिये? जवाब यह है कि उनको उसी हालत पर ले आवे जो प्रार्थना करते वक्त अपनी बनाई गई है। उनको मन्कूश (स्पष्ट) कर दिया जावे कि हम एक आजिज बन्दे (तुच्छ दास) और

अदना (तुच्छ) भिखारी हैं जो दरगाहे आली (मालिक के द्वार पर) में अपनी हैसियत से रूजू हो रहा है। उसको चाहिये कि जो कुछ भी हो अपने मालिक के सामने सब रख दे और मालिक के मौज (इच्छा) के ताबे (अधीन) हो जावे। यानी अपना सब कुछ मालिक के सुपुर्दे कर देवे और अपनी खालिस सूरत अर्पित कर ले। सब तरफ से सिमिट कर उस तरफ हो जावे। इस तरह पर कि दुनियां तीरोतार (अंधेरी) मालूम होने लगे। सब की याद उसी एक की याद में शामिल हो जावे और हर जुबां (रोम-रोम और ज़र्रा-ज़र्रा) से याद ही याद बाक़ी रह जावे। इसको फ़नाये मुतलक (पूर्णतया मिटा देना) कहते हैं। अगर यह हालत इन्सान अपने में पैदा कर ले तो मैं समझता हूँ कि उसको सरापा (सिर से पैर तक) प्रार्थना समझना चाहिये। और इसका हर खयाल वही होगा जो मौज मालिक की है। वह कभी उस तरफ़ रूजू न होगा जो ख़िलाफ़ मन्शाय एज़ादी (ईश्वरी) हो और वह वही चाहेगा जो मालिक का हुक्म होगा।

ऐसी प्रार्थना करने के लिये लोगों को तैयार रहना चाहिये। अगर किसी शख्स ने इसको पूरा कर लिया या इस हालत में पेबस्त (स्थित) हो गया तो बताओ फिर उसको क्या करना बाक़ी रह जाता है? सिवाय उसकी याद के और फिर याद भी कैसी जो कभी न आवे। बड़े-बड़े लोग इस हालत को तरसते चले गये मगर इसका किनारा या छोर न मिला। आजूँ (इच्छा) ही रह गई। क्या यह ऐसी मामूली बात है? वहाँ क्या है? सुनकर अश अश (महान आश्चर्य) करोगे। वहाँ पर वे इन्तहा सादगी है जिसमें भन्नाटा (vibration) होते हुये भी ऐसा सकून है जिसको सकून भी नहीं कह सकते। तेज़ी और उठान तो दर किनार। उजाला कह लो। मगर क्या यह सही है? उजाला न सही, अन्धेरा कहो, तो क्या सही हो जावेगा? हरगिज़ नहीं। अब क्या है? यह हालत जो शायद किसी को पसन्द नहीं आवेगी। वह

क्या है जहां पर हर चीज़ का खात्मा होता है। उस जगह पर पहुंचना है जो सबका मुबतदा (श्रोत) और अस्ल है। हकीकत तो यही है। यहीं पर जुमला मदारिज (सभी स्तर) खत्म होते हैं। इसके आगे मैं क्या कहूँ...ईश्वर वह वक्त लावे कि आप सब पर रोशन हो जावे। आमीन (ऐसा ही हो) !

आगाज़ (आरंभ) आलम (श्रृष्टि) से पहले खामोशी ही खामोशी थी। वह चीज़ जब नीचे उतरी तो अपना अस्ल या जौहर साथ लाई। दोनों की हालत लगभग एक ही थी। उस पर गिलाफ़ दर गिलाफ़ लिपटते गये। इसके करनेवाले आप ही थे। दरिया की मौजों ने समुन्दर बपा (उत्पन्न) कर दिया। बहुत से कतरे मिलकर दरिया बन गया। अस्ल क्या थी ? वही नुक्ता, जौहर, या अस्ल जो साथ आया ? दरिया की बुनियाद क्या थी ? चन्द कतरे पानी जो आबशार (भरना) से गिरा और दरिया बहा दिया। मतलब क्या था ? कि उस कतरे में गंर ज़रूरी कतरे शामिल हो गये और अस्ल नुक्ता को छिपाकर महज़ उसकी अक्सी सूरत लेने लगे। यानी उसको मोटा या ठोस कर दिया। कोई शर्लस अगर किसी चीज़ को देखे तो उसकी मोटी शक्ल हमेशा निगाह के सामने आयेगी। अगर मुतवातिर देखता रहे तो एक वक्त वह आयेगा कि निगाह के सामने से उसकी मोटी शक्ल भी गायब होने लगेगी। सिर्फ़ उसका आकार बाकी रह जायगा और कोशिश की जावे तो यह चीज़ भी गायब होने लगेगी। फिर भी कोशिश करना चाहे तो वह चीज़ भी जाती रहेगी जिसने मिलकर उसको बसी (बड़ा) कर दिया है। वह सब गायब होने लगेगी। और आखिर में वही चीज़ रह जावेगी जो वहां पर मौजूद है। यह बात कैसे हो सकती है ? जब इतना अभ्यास किया जावे कि सिर्फ़ अस्ल चीज़ को जो हमें हिस्से में मिली है निगाह में रखते हुये हम हर काम को अन्जाम दें। वह निगाह जो हमने उस पर कायम की है उसको नुक्ते प्रार्थना समझें। आगाज़

इसी को कह सकते हैं। और वह फूवात (व्यर्थ की वस्तुयें) जिनको हमने दूर किया है प्रार्थना की पहली हालत कही जा सकती है। लोग ताज्जुब करेंगे कि मैंने इस हालत को आगाज़ क्यों कहा है। यह हालत चेतनता की है, जिसको आगाज़ कहा गया है। चेतनता हर हिस्से में मौजूद है। मगर यह आला तबके (उच्च श्रेणी) की चेतनता है। इसके बाद के मदारिज मैंने यूँ नहीं दिखाये कि इस हालत पर निगाह पहुंचना एक दुश्वार अम्र (कार्य) है। और उसकी आखिरी हालत निगाह में जम ही नहीं सकती। इस हालत में जाकर ऐक्यता (oneness) भासती है। प्रार्थना इसके बाद से की जाती है। यह तीन मनाज़िल अर्थात् मंजिलें (या ढाई कह लो क्योंकि इसके बाद पता नहीं रहता सिर्फ़ ढाई दर्जे तक पता रहता है) समझने के लिये आगाज़ और अन्जाम (अन्त) कह लो; दरमियानी सूरत भी इसमें शामिल है। बाक़ई यह मसकन (घर) है जिसको मैंने आगाज़ कहा है। पहली हालत प्रार्थना की जो कही गई है लोगों के समझ में न आवेगी। मतलब यह है कि जिस तरह एक बच्चा अलिफ़, बे, से तालीम का आगाज़ करता है मगर मक़सद यह होता है कि आगे चलकर उसके ज़रिये बड़ी-बड़ी बातें समझने लगे और मुमकिन है किसी वक़्त वहाँ से आगाज़ करे जिसके बाद अस्ल मसायल (समस्या) और दकीक़ (कठिन) बातें शुरू होती हैं। गोया वह मक़सद उसके पेशनज़र है ग़ोकि वह अभी हरफ़ तेहज़्जी (शब्द रचना) की बन्दिश में ही बंधा हुआ है। उसको अभी ख़्वाह अब्जद ख़्वां (आरम्भ करनेवाला) कह लो ख़्वाह तालीम का इब्तदाई मरहला (वस्तु) समझ लो। ग़ज़े कि बमुकाबले उस चीज़ के अभी यह बातें सब फूवात में शामिल हैं। यह पहली हालत सब में मिलेगी। जब कोई शरुस इसको शुरू करेगा और अगर उसका नुक्ता वहीं जमेगा तो उसका असर उस मोटी चीज़ पर दौड़ने लगेगा। रफ़्ता रफ़्ता उसकी यह हालत हो जायगी कि बस वही नुक्ता उसके सामने होगा और उस पर उसकी बैठक या क़याम हो जायगा। यह शुरू की मन्ज़िल

है। जब कोई हिम्मत करके उस नुक़्ते पर पहुँच जाय तो नुक़्ता को बढ़ाता जाय । बढ़ाने का यह मतलब नहीं कि उसको फूँक कर गुब्बारा कर लिया जावे बल्कि यह कि उसमें उस चीज़ या ताक़त का इज़ाफ़ा (जोड़) किया जाय जो उसकी अस्ल है । जब उसमें तरक्की होना शुरू हो जाय और वह मोटी चीज़ जो पहली चीज़ से बहुत हल्की और बारीक़ है लतीफ़ (सूक्ष्म) मालूम होने लगंगी और आख़ीर को वह भी मादूम (गायब) हो जायगी तब समझना चाहिये कि हम उस दायरे में पहुँच चुके हैं जहाँ किसी चीज़ के वजूद लतीफ़ (सूक्ष्म अस्तित्व) को गुमां (आभास) बाकी रह जाता है ।

अस्ल से धार की बहुत सी सूरतें नुमायां हो गईं । ये सब चीज़ें उतरी हुई थीं यानी अपने सरचश्म (श्रोत) से आई थीं । ये सब चीज़ें बेकार नहीं थीं बल्कि यह ताक़तें थीं जिन्होंने मुख़तलिफ़ सूरतों में काम करना शुरू कर दिया । और, इन ताक़तों ने वहाँ पर अपना वह असर दिखाया जिसकी जहाँ पर जैसी ज़रूरत थी । यह कुल ताक़तें अपने अस्ल से धार की सूरतों में नुमाया हुईं और अपना-अपना काम दिखाया । बच्चे की हालत सब को मालूम है कि एक वक़्त पर वह हिल भी नहीं सकता था । वह आया । उठने-बैठने, बोलने और दौड़ने लगा । गोया जो चीज़ें कि उसमें मौजूद थीं नशोनुमा (प्रगट) पाने लगी । इन्सान की पूरी जौलानी (क्रियाशीलता) आख़िरकार आ ही गई । उस चीज़ ने जो बच्चे में शुरू में ठूँसी गई थी अब नशो नुमां पाकर जुदागाना सूरत अस्तया कर ली । अस्ल क्या थी ? वही एक क़तरा, जो हिस्से में आया । अब उसमें बहुत सी चीज़ें जिनको हमने गिलाफ़ दर गिलाफ़ कहा है शामिल होती गई । यह कैसे हुआ ? मां की आदत और उसका असर । बाप के ख़्यालात और तरीक़ा तालीम । इसके आगे जो बातें उसमें दूसरों के असर से पैदा हो गई । इन सब ने बज़ात ख़ुद अपना-अपना फ़ल शुरू कर दिया और जल्दी असरात कायम कर दिये और वह चीज़ें जो

ऐसे कायम हुई थी उन्होंने ने भी अपना काम करना शुरू कर दिया । गर्जों कि कहां तक कहा जावे फ़ैल दर फ़ैल होते ही चले गये । नौबत, बईजां रसीद (यहाँ तक पहुँची) कि उसको इस हालत में ले आये कि उसको कतई ख़बर न रही कि मैं कितने मुख़्तलिफ़ अमलों में से होकर गुज़र चुका हूँ । अब जो यह सब फ़ैन अमल में आये उन्होंने एक ठोसता की शक़ल अख़्तयार कर ली । अब यह चीज़ या हालत हटाये नहीं हटती । अपने में इसको इतना गिरफ़्तार कर लिया या लपेट लिया कि इसको यह ख़बर भी न रही कि क्या हो गया । आगे और गुल ख़िला । उसने दुनियां देखी । तर्जे माशरत (जोविकोपार्जन) का असर पड़ा । चाल दाल का असर हुआ । गुफ़्त व शुनीद (कहने सुनने) ने असर डाला । वाक़ायत ने रंग जमाया । फ़िक्कों ने कब्ज़ा किया । अब उसकी सूरत कुछ और हो गई । अब आगे सुनिये । यह बातें जो उसमें रंग की शक़ल में आ चुकी थी उन्होंने अपने मुतरावफ़ (आसपास से अनुकूल) ज़रत (सामग्री) कशीद (खींचना) करना शुरू कर दिये । उन पर और ज़िला (कलई) हो गई । ख़याल फ़रमाइये कि क्या शक़ल थी और क्या हो गई । ज़र्रा (क़तरा-बूंद) को ऐसा दबाया कि उसकी रंगत अब नज़र ही नहीं पड़ती । और यही नहीं । वह चीज़ जो अब पूरे तौर से दाख़िल हो गई है और उसको जितना जोरदार आपने बना दिया है और बनाते जा रहे हैं उतना ही तेज़ उसमें अमल होता चला जा रहा है । और जितनी तेज़ी बढ़ती जाती है उतना ही ज़्यादा असर आप क्रुदती ताक़तों से घसीट रहे हैं । जैसे आबशार की हैसियत दरिया बनने से पहले थी कि उसमें चन्द क़तरे पहाड़ से आकर उसके पीछे जमा हो गये थे और टपकते थे । अब इसको कुछ बर्फ़ ने मदद दी और कुछ पानी ने, गर्जों कि उसकी तादाद और पानी मेक़दार (मात्रा) बढ़ती ही गई और रफ़्ता रफ़्ता एक परनाला की शक़ल अख़्तयार कर ली । फिर क्या हुआ ? आगे और बढ़ा । बढ़कर कुछ पानी इधर-उधर से रसियाने लगा । धार और बढ़ गई । कहीं गढ़े में पहुँची, कहीं उससे ऊपर उभरी, हत्ता

(यहां तक) कि उसमें खुद सोत जारी हो गये। आगे क्या हुआ ? पानी का चपमा जो इधर-उधर जमा होकर इकट्ठा हो गया था उसमें शामिल हो गया। रवानी बढ़ने लगी। और इधर चूंक-शुरू के रफिया ने से मैदान और जगह पानी लेने की और बसी हो गई थी अलगारों (अत्यधिक) पानी आने लगा। दरिया यहाँ तक बढ़ा कि उसके लिये बड़ा लफ्ज समुन्दर ही हो सकता है। अब उसकी हैसियत क्या हो गई ? क्या इब्तदा थी और क्या इन्तहा हुई ? वही जो बच्चा की हालत काफ़ी नशोनुमां (पालना पोसना) पाकर हुई थी। यह मौजें जो दरिया में नुमाया हैं इनकी अस्ल ओर कुछ नहीं। बल्कि नतीजा उन कर्मों का है जिन्होंने रास्ते में मिल मिलाकर उस सूरत के अस्तयार करने में मदद दी है। यह वही मौजें हैं जिनको आखिर में लोग मौज या आनन्द तस्स्वबर (खयाल) करते हैं। यह आलम इन्सान की जिन्दगी में जवानी की हालत में ज्यादा होता है बल्कि बहुत कुछ लैसपोत हो चुकी है। समुन्दर की हालत वह कही जा सकती है जिस वक्त इन्सान उस रूप में आ जाता है जिसको बहुत से अफ़ाल (कर्मों) का नतीजा समझना चाहिये। एक सवाल अहम (महत्वपूर्ण) बाक़ी रह जाता है कि चीज़ को देखते-देखते वह चीज़ निगाह के सामने से क्यों हटने लगती है और सिर्फ़ आकार बाक़ी रह जाता है, और फिर वह भी नहीं रहता ? वजह यह है कि मादे (स्थूल वस्तु) में मादे ही को देखने की ताक़त है। उसके बाद उसके बाद वाली ताक़त ही में देखने की ताक़त है। इसी तरह उसके बाद उसके बादवाली ताक़त गर्जे कि इसी तरह यह बात बराबर चली जायेगी तावक़ते कि देखने की ताक़त क़तई मादूम (लुप्त) न हो जावे। इसके आगे भी बहुत कुछ बाक़ी रहता है जो एहसास की शक़ल में नुमांया होता रहता है। और उसके बाद वह भी नहीं रहता। और फिर क्या कहूँ ? रहना भी नहीं रहता। और यह भी नहीं रहता। अब क्या होता है ? वही नफ़ी (निषेध) की हालत। वही अस्ल। क्या कोई शरूस् इसके समझने की काबिलियत रखता है ?

वही जो उस तक पहुँच चुका है। अब यही गलती है। यूँ कहना चाहिये कि जो महज नेस्त ही नेस्त में गोताग्रस्त है (शून्य की स्थिति में लय है)। मगर भाई यह नेस्त भी तो कुछ है। अगर है नहीं तो इसको ऐसा क्यों कहा ? अभी और बढ़ो।

एक सवाल और रह जाता है। धारें उतरते-उतरते मोटी क्यों पड़ गई ? मसला दक्कीक (कठिन) है। आदमी किसी ऊँचे पहाड़ की चोटी से कूदने पर अस्नायराह (रास्ते) ही में नीमजां (अधमरा) क्यों हो जाता है ? लोग कहेंगे जमीन की कशिश की वजह से। मैं कहूँगा कि जब ऊपर से नीचे का इरादा हुआ तो उसके ख्याल की गर्मी नीचे की तरफ़ मबजूल (खिंचे) हो जाती है। गोया यह चीज़ धक्का खाकर उससे निकलना शुरू हो जाती है। इस तरह जब धारें ऊपर से नीचे की तरफ़ रूजू होती हैं तो उसको भी ऐसा ही समझ लेना चाहिये। मोटी चीज़ से मतलब ठोसता से है, और ठोसता उस चीज़ में कही जाती है जिसमें ज़िन्दगी न हो। अब लोग सवाल करेंगे कि भला क्रुदरत की धार और उसमें ज़िन्दगी न हो। यह कैसे हो सकता है ? जवाब यह है कि हर चीज़ क्रुदरत से आई हुई है। नबातात (वनस्पति जगत) हैवानात (प्राणी जगत) और जमादात (खनिज जगत) सब उसी का नमूना है। मगर क्या इन सब चीज़ों में ज़िन्दगी कही जाती है ? हरगिज़ नहीं। अगर कही भी जाय तो जैसा कि कहा गया है वह एक ख्वाबीदा (सोई हुई) ज़िन्दगी है। यही हाल उस चीज़ का समझ लो। इन्सान अपने आपको अपने कर्मों से उससे निस्वत दे लेता है और उसी से हम-आहनगी (ऐक्य) अस्तयार कर लेता है।

जब हमने यह उसूल क्रायम कर दिया कि प्रार्थना लाज़मी शै (वस्तु) है तो यह भी लाहक (आवश्यक) होता है कि अल्फ़ाज़ में प्रार्थना की जावे। चुनाचें बहुत मुख्तसिर प्रार्थना जो मुन्दर्जे ज़ेल (निम्नलिखित)

है अभ्यासी के लिये करना लाजमी सम्भत्ता है । और भी कई तरीका से प्रार्थना हो सकती है । मगर मैं इस छोटी सी प्रार्थना को ज्यादा सर्जिह (प्राथमिकता) देता हूँ :—

ऐ मालिक कुल ! तू ही हमारी जिन्दगी का मकसद है ।

हमारी खाहिशात हमारी तरक्की में रहना अन्दाज हो रही हैं ।

तू कादिर मुतलक और हमारा माबूद है ।

बिना तेरी मदद के तुझ तक हमारी रसाई मुहाल है ॥^१

आशाज्ज आलम से पहले हर जगह सकून ही सकून था । जब दुनियां मौजूदा शकल में नुमायां हुई तो वह मर्कजी नुकता लोगों के दिलों में पूरे तौर से जागझीं (प्रविष्ट) हो गया । उस नुकते ने जो बड़ी चीज का एक हिस्सा था यह लाहक कर दिया कि हम अपने मुरज्जे (ध्रोत) असली की तरफ़ रूजू हों । प्रार्थना में हम यही करते हैं । हम उसी मर्कजी नुकते पर पहुँचने की कोशिश करते हैं । यह कब मुमकिन है ? सिर्फ़ उस वक़्त जबकि हम अपनी वही हालत बना लें । ऐसी हालत बनाने के लिए मशक़ करने की ज़रूरत है ताकि हम अस्ल कैफ़ियत तक रसाई (पहुँच) हासिल कर सकें । यह इस तरह से हासिल हो सकती है जबकि हम अपने आपको कुल्लियतन क्रुदरत के मर्जी पर छोड़ दें (जो कि बिलकुल सीधी, मादी और शान्त है) । जाहिरा तौर पर यह

१ हे नाथ ! तू ही मनुष्य जीवन का ध्येय है ।

हमारी इच्छायें हमारी उन्नति में बाधक हैं ॥

तू ही हमारा एक मात्र स्वामी एवं इष्ट है ।

बिना तेरी सहायता के तेरी प्राप्ति असंभव है ॥

बहुत मुश्किल मालूम होता है । मगर दर अस्ल ऐसा नहीं है । किन के लिये ? सिर्फ उनके लिये जो उसमें घुसना चाहते हैं । जब कोई शख्स अपने अन्दर यह जज़्बा (भाव) पैदा कर लेता है तो वह प्रार्थना की हालत में है । यह हालत हर एक की हो सकती है जो इसका मुतलाशी (ढूँढ़नेवाला) होगा । जो शख्स एक लमहा (क्षण) भी इस कैफ़ियत पर पहुँच जाता है तो उसकी दुआ मुस्तजाब (स्वीकार) होती है । इसके लिये रोज़ाना मशक्क की ज़रूरत है ।

उसूल नम्बर-३

हर एक भाई को चाहिये कि अपना मक़सद कायम कर ले और वह यह कि ईश्वर तक पहुँच कर उसमें लय अवस्था हासिल कर ले मुस्तक़िल क़याम कर ले और जब तक यह बात हासिल न हो जाय चैन न आवे ।

हर शख्स का फ़ज़ है कि जिस चीज़ को हासिल करना है उसका ख़याल पहले मज़रूर बांध ले ताकि उसका ख़याल और कूब्वते इरादी (इच्छा शक्ति) उस तक पहुँचने का रास्ता बना लेवें । देखा गया है कि जिन शख्सों ने ईश्वरी विषय में उसकी आख़री हालत को मक़सद नहीं बनाया है वह मज़रूर उस आख़री दौलत से महरूम रह गये हैं । इसलिए कि वह दौलत मिलने से पहले जो चीज़ कि उनको अस्नाय राह (मार्ग) में हासिल हुई उसको अस्ल समझ बैठे और वहीं पर रुक गये और उसी को सब कुछ समझ लिया । कहिये मक़सद कायम न करने से कितना नुक़्स वाक़ै हुआ । दुनियांदारी के मामलात में शौर फ़रमाइये कि जब तक कोई इन्सान अपना मक़सद नहीं रख लेता उसकी

कोशिश इस तरीके की नहीं होती और न इतनी जांफिशानी (घोर परिश्रम) से काम होता है जिससे उसको मकसद बरारी (ध्येय की पूर्ति) में मदद मिले। कहा गया है कि कष्टी में जब तक पतवार न हो उस वक्त तक उसको वहां नहीं ले जा सकते जहां कि जाना है। अगर हम इस जिस्म को कष्टी समझ लें और उस जगह को जहां कष्टी चलती है दरियाय मारफत (आध्यात्मिक) से निस्बत (मान लें) दें तो यह बात लाजिम हो जाती है कि हम कष्टी में पतवार जरूर लगा लें ताकि हम उस बहरे जख्दार (विशाल समुद्र) को जिसको मैंने दरियाय मारफत कहा है तै कर सकें। पतवार अस्नायेराह मारफत में क्या चीज है? यह हमारी क़ुब्वते इरादी है जिससे हम अपना बेड़ा खेकर मन्जिलें मकसूद पर ले जाते हैं। जरूर है कि रास्ते में बहुत सी जगह बेशुमार भंवर मिलने हैं। अगर इस क़ुब्वते इरादी और पहुँचने के ख्याल की मजबूती से उन भंवरों को पार कर जाते हैं और हमको सही रास्ता मिलता जाता है। अब हमारी निगाह बूँकि मारफत पर है लेहाजा हम ऐसा मकसद भ्रमने सामने रखते हैं जो सबसे ऊँचा है और वह मकसद वही हो सकता है जिसको जाते हकीकत से मन्सूब (संबंधित) करना वाकई ठीक होगा। इन्सान का फ़र्ज भी यही है कि उस तक पहुँचने की कोशिश करे। जब तक इन्सान के ख्याल में यह मकसद नहीं जमता उस वक्त तक यह रास्ता तै करना अम्र मुद्दाल हो जाता है और मदद ईश्वरी उसी वक्त शामिल हो जाती है जबकि उसको यानी जात को यह यक़ीन हो जाता है कि वाकई हमारा बन्दा हम तक पहुँचने की कोशिश कर रहा है। जब इसके असर से जात में एक तरीक़ की हुबाबी (उभरने-वाली) खटकु पैदा होने लगती है तो गोया आपने अपने ख्याल को उसमें अन्जमाद (जमा) कर दिया। दूसरें मानों में, प्रीतम और प्रेमी की मिसाल पेश नज़र होगी। यानी फ़ासला जो बन्दे का जात तक था अब करीब एहसास होने लगा। क़ुब्वत (सामिप्य) यहां तक बढ़ी कि

वह हिस्सा जो ख्याल में दूरी का एहसास दिलाता था रफ़ता-रफ़ता मिटने लगा। होते-होते नौबत यहाँ तक पहुँची कि इस ख्याल को भी भूल गये। वजह यह थी कि क़रीबी की निस्वत और भी क़रीबतर हो गई। यह क़ुर्बत यहाँ तक बढ़ी कि हम उसके बिल्कुल क़रीबतर होकर उसमें शामिल होने का एहसास करने लगे। रफ़ता-रफ़ता अब हमारे ख्याल से यह बात भी क़तई काफ़ूर हो गई कि हम वाकई उसके क़रीबतर हैं। बात यह थी कि हमने इस क़दर उसकी नज़दीकी हासिल कर ली कि हमारा वहमो गुमां यानी जो ख्याल अलहदगी का था और उस ख्याल से अलहदा था अब उससे ऐसा सिमिट गया कि उसकी हालत एक तरीक़ा से मख़फ़ी हरकत की सी हो गई जो प्रलय के वक़्त थी। अब यह ख़ामोश हरकत जो हमने उसमें पैदा कर ली और हर तरीक़ा से उसमें सिमिटने लगे उससे हमारा फँलाव उसमें होने लगा। इस तरीक़े से हमारी लय-अवस्था उसमें होकर इस क़दर देरपा (देर तक ठहरने वाली) और मुस्तक़िल हो गई कि अब हमारा क़याम उसमें मुस्तक़िल तौर पर हो गया और हम उस बहरे ज़ख़्ख़ार में जिसका ओर छोर नहीं है शौनावरी (तैरने) करने लगे। अब हमको अम्ल ज़िन्दगी मिलने लगी। वह क्या थी? वह असरात समुन्दर के थे जिसमें हम अब तैर रहे हैं। देखिये जब आपने मुस्तक़िल सूरत अपने ख्याल की ज़ात में लय होने की बांधी थी और इरादा मुस्तक़िल बना लिया था तो उसने मदद दे देकर आख़िर मक़सद पर पहुँचा दिया। नतीजा यह हुआ कि आपने अज़ ख़ुद वहाँ पहुँच कर अपना क़याम पूरी तौर से उसमें ज़मा लिया। भाई यह बात किस क़दर मुश्किल थी जो मद्दज आपके इरादे और सही मक़सद कायम करने की वजह से हासिल हुई और कितनी आसानी से आप वहाँ पहुँच गये ज़हाँ जाने का मन्शा था। यह रास्ता कैसे पार हुआ? पहले यह ख्याल था कि हम उस तक पहुँचे और फिर आप कोशिश और सई बलीश (अथक प्रयत्न) उस तक पहुँचने की करने लगे। चूँकि बेहतरीन

मक़सद आपके सामने था और उस पर आपको पहुँचना था इसलिए आप में उस वक़्त तक पहुँचने की दिलचस्पी भी पैदा हो चुकी थी । और जब किसी काम में दिलचस्पी पैदा होती है तो उसके करने के लिये बार-बार तबीयत चाहती है और यह आदत ऐसी बन जाती है कि बग़ैर उसके किये हुए तबीयत को क्ररार व चैन भी नहीं मिलता । इसका अभ्यास करने-करते अजब खुद तबीयत उस तरफ़ और तेज़ होने लगती है । आदत पड़ते-पड़ते मैलानेतबा (आन्तरिक रुझान) यहां तक हो जाता है कि अभ्यासी की तबीयत इस जोर शोर से मायल होने लगती है कि बग़ैर इसके किये उसको कुछ अच्छा भी मालूम नहीं होता जो हालत बढ़ जाने पर बेचैनी के नाम से मन्सूब की जा सकती है । इसमें तड़प भी शामिल है । लेहाज़ा यह बात लाज़िम आई कि उस तक पहुँचने के लिये हमको बेक्ररार ज़रूर रहना चाहिये । जिस तरह से जब आगाज़े आलम का वक़्त आया तो वह मख़फ़ी हरकत अपने लिये रास्ता बनाने के लिए बेक्ररार थी । उसकी बेक्ररारी ने उसके लिये रास्ता बना दिया । हमारी बेक्ररारी हमारे लिये मक़सद पर पहुँचने का रास्ता बना देगी ।

उसूल नम्बर-४

अपना जीवन साधराण बना ले और वह ऐसा हो कि नेचर से मिल जुल जावे ।

मज्जमून निहायत मुश्किल है जो इस उसूल में रखा गया है । सादगी कुदरत की जान है । वह यह परतो (परदा) है जो ज्ञात में निहां रहता है । इससे रोइदगी (चाल) और बालीदगी (बढ़ना) अमल में आती है । इसको अगर ज्ञात की रूहेरवां (आत्मा) कह लिया जाय तो बेहतर होगा । यह वाकई नेचर की जान है । इससे कूद फांद शुरू होती है । यही चीज़ बिलकुल अस्ल है । इसके बाद जो बात आती है वह माया का दायरा है । आमतौर पर लोग इसी दायरे में काम करते हैं और उछल फांद और चड़क भड़क सब इसी की तरह रहती है । गोया यह चीज़ आगाज़े आलम का बायस होती है । इस चीज़ को लोग अपने अन्दर नशोनुमां (बढ़ावा) देते जाते हैं । नौबत यहाँ तक आती है कि ऐसी गुत्थियाँ बना लेते हैं जिसके सुलझाने के लिए ख़ास कुव्वते इरादी की ज़रूरत पड़ती है । इसमें लोग लिपटलिपटा कर सिमिट सिमटाकर ऐसी नमूद (रूप) अख्तयार कर लेते हैं जो बज़ाहिर इसमें एक ठोसता का निशान नज़र आने लगता है । बेरूनी (बाहरी)

हवा और माहोल (वातावरण) भी उस पर असर डालना शुरू कर देते हैं। उसमें फ़ेल दर फ़ेल नुमायां होने लगते हैं। नतीजा ख़राबी ही होता चला जाता है। इस पर्व में सादगी का फ़ैलाव छिपता जाता है। यह सब मिल-मिलाकर इन्सान ऐसा जाल बना लेता है कि जिसमें वह खुद बख़ुद फसने लगता है। बल्कि यों कहो कि फंस जाता है।

आगाज़े आलम से पहले ख़ामोशी ही ख़ामोशी थी। क्षोभ पैदा हुआ। कायनात (सृष्टि) ज़हूर (प्रकट) में आई। जो चीज़ें कि पैदा हुईं अपनी अस्ल ताक़त का अक्स लाई और क़रीब-क़रीब जुज़न (थोड़ी-थोड़ी) हर ताक़त मौजूद थी। इनका इस लेहाज़ से वही काम है जो अस्ल का था। क्षोभ के असर से कायनात और उसके कायम रखने की ताक़त ज़हूर पज़ीर (प्रकट) हुईं। दूसरे मानों में एक क्रिस्म का मकड़ी के जाल की तरह तांता पुर गया। और हर चीज़ और ज़रत जिन्होंने तांता बनाया या लड़ी बनाई ताक़त रखती थी। उसकी शक़ल अब भी वैसी ही है और रहेगी। जब तक कि उसकी वापसी का वक़्त न आ जाय। इन्सान जिस वक़्त पैदा हुआ उसकी हालत ख़ाबीदा शक़ल में थी। उन एजज़ा में जिनको अपने साथ लाया था उस वक़्त नशोनुमां (विकसित) न थी। होते-होते वह ताक़तें तरक्की करती रहीं और इस हालत में पहुँचा दिया कि वह अज़ली (ईश्वरी) ख़याल जो उसके ज़हूर (प्रत्यक्ष करने) में लाने का बुनियादी पहलू था काफ़ी तरक्की कर गया। यही एक चीज़ थी जो ज़ात से पैदा होकर कायनात का बायस हुई और फ़ैलाव और सारा पसारा कर दिखाया। दूसरे मानों में, ताक़तों का लेहाज़ रखते हुए उसकी कुल ताक़त हर चीज़ में हर ज़र्रे में, पूरे तौर से मौजूद हो गई। अगर एक ज़र्रा के बहुत से छोटे-छोटे टुकड़े किये जाय तो उन हज़ारों टुकड़ों में से हर एक में वही ताक़त मिलेगी जो अस्ल ज़र्रे में थी। इस तरीक़े से वह अस्ल चीज़ ख़याल या क्षोभ जिसका उभार विस्तार रूप में इन्सान में मौजूद

है ऊपर लिखे हुए उसूल के मुताबिक वही ताकत रखती है। मगर चूँकि ज्ञात को अपनी शक्ति ऊपर से नीचे मबजूल (बदलने का) करने का ख्याल था यानी बुलन्दी से पस्ती को जो एक दूसरे के मुतजाद (विरोधी) हैं लेहाजा इस ख्याल ने जो इन्सान में मौजूद है उसके बर अक्स शकल अस्तयार की। और, इस लेहाज से वह अपने में विस्तार इस शकल में करने लगा, जैसे कि ज्ञात ने अपने मयार (वृत्त) में की थी। चूँकि जुजों ने मुतजाद पहलू को अपना अस्ल समझ रखा है। इसलिये उससे वह सूरतें नुमाया होने लगी जो नेचर या कुदरत के बरअक्स (विरुद्ध) है और उसी शकल का ताँता या जाल वह अपने अन्दर बुनने लगा। उसकी शकल भी अब बरअक्स सूरत में वही हो गई जो ज्ञात की शकल अपने खालिस रूप में है। फ़र्क इतना रहा कि वहाँ ख़लूस है और यहाँ मुतजाद हरकत होने की वजह से उसके खिलाफ़। काम दोनों ने एक ही किया। ज्ञात के पसारे की वापसी उसी वक़्त हो सकती है जब वह मियाद जो ख्याल के भन्नाटे ने कायम कर ली ख़त्म हो जावे। इन्सान की वापसी यानी इन्सान की पैदा कर्दा (की हुई) धारों की वापसी जो ताँता या जाल की शकल में मौजूद है उस वक़्त हो सकती है जब वह उस भन्नाटे को ख़त्म कर दे जो उसने उन चीज़ों के बनाने में पैदा किया है। यह भन्नाटा जो इन्सान ने पैदा किया है चूँकि ज्ञात के बर अक्स सूरत का भन्नाटा है इसलिए उसकी बिगड़ी हुई शकल और ठोसता की हालत उसमें मौजूद है। और जो अस्ली भन्नाटा ज्ञात के क्षोभ द्वारा पैदा हुआ है उसमें अपने तबके (स्थिति) के लेहाज से सूक्ष्म तरीक़े में और अस्ल रूप में भन्नाटा की शकल नुमाया है। बस, इन भन्नाटों में यही फ़र्क है। इसमें अन्धापन है और उसमें जैसा का तैसा। जो ताकतें कि अस्ल में मौजूद हैं वही ताकतें इन्सान में नमोदार हुईं। इसलिए कि इन्सान के ख्याल में वह ज़रत शामिल थे जो ज्ञात के क्षोभ के वक़्त मौजूद थे। इसमें चूँकि

अन्धापन था इसलिए उसके मुतजाद काम किये । और वह क्रुवा (शक्ति) जो इन्सान में जागजी (प्रविष्ट) हुये उनका इस्तेमाल बरअक्स होने लगा । इन सबने मिल-मिलाकर उस ताँतें में मदद दी जो इन्सान ने अपने ख्याल से बनाया था । उसका हर जर्ज़ इसी लेहाज़ से इस क़दर ताक़तवर बन गया जैसा कि ज़ात के ताँतें का था और उसने भी अपने अन्दर एक दुनियाँ बसा ली । हर क्रुवा इतना ताक़तवर बना कि जवाब देने लगा और एक जाँदार की तरह उसमें हरकत पैदा हो गई । और हर चीज़ में मन और ख्याल काम करने लगा । जितने आदमी उतने ही ख्याल शामिल हैं । इस तरह जैसे हर क्रुवा चूँकि ताक़तवर बना दिया गया लेहाज़ा उतने ही ख्याल उसमें अपने-अपने लेहाज़ से पैदा हो गये । अब कहिये आपने भी कुदरत की मानिन्द अपनी एक दुनियाँ बसा ली । तवाज़न (साम्यावस्था) जाता रहा । जंग व जदल (झगड़ा) शुरू हो गई । एक क्रुवा कह रहा है कि हवा ख़ोरी को चलो । दूसरा कह रहा है कि ठण्ड बहुत है । जुक़ाम हो जाने का अन्देशा है । तीसरे ने एक बात और पेश की । चौथे ने दूसरी बात पेश की । पाँचवें को दौलत कमाने की फ़िक्र हुई । छठे ने कहा रोज़गार करो । सातवाँ कहता है इसमें बहुत मेहनत पड़ेगी । आठवाँ कहता है कि किसी मालदार अजीज़ से या रिश्तेदार से दोस्ती करो और उसका दिल हाथ में लो ताकि वह सारी दौलत तुम्हें दे दे । एक और क्रुवा जवाब देता है कि भाई यह सब बेसूद है जब तक कि शादी न हो जाय और बाल बच्चे न पैदा हों तब तक यह कोशिश बेकार है इसलिए कि उनका फ़ायदा उठानेवाले तो पहले मौजूद हों । अब फ़िक्र शादी की हो गई । बच्चे भी हो गये । इनको सिखाने पढ़ाने की फ़िक्र हुई । बड़े हो गये । कभी तमाशे की सूभी । फ़लां थियेटर में जमीला अच्छा पार्ट खेल रही है । चुनांचे देखने की ख्वाहिश हुई । वहाँ गये, तमाशा देखा । चार छः रोज़ मुतवातिर देखा । जमीला के हरक़ात व सकनात (हावभाव) ने बार-बार तमाशा देखने को मजबूर किया । अब वह बात इतनी भाई

कि उसके हरकात व सकनात (हावभाव) और इशारों ने उस क्रुवा में और हरकत दे दी जिसको इन्सान पहले नशोनुमा ले चुका है। हर बात जमीला की भाने लगी। जब पसन्द आई तो उससे मुहब्बत का आगाज हो गया। अब इसी फ़िक्र में घुल रहे हैं और उस हालत और ख्याल को और मजबूत कर रहे हैं। और उस ख्याल के लिये आदत भी बनती जा रही है। तांता में इजाफ़ा भी हो रहा है। आदत बिगड़ रही है और इस आदत का यह असर हो रहा है कि उसके मुतरावफ़ (प्रकार की) हर चीज़ जमीला मालूम हो रही है और उस पर वही ख्याल असर कर रहा है। अब फ़िक्र इस बात की हुई कि उसके सेरी (पूति) बिला दौलत के नहीं हो सकती। मगर उनको जमीला के ख्याल से फ़ुसत कहाँ कि वह मेहनत से रुपया पैसा पैदा करें। चुनाचें यह फ़िक्र हुई कि कहीं किसी की रकम मारो। साथ ही यह ख्याल पैदा हुआ कि इस तरह मुमकिन है कि जेल की नौबत आ जाय। मुक़दमा बाज़ी शुरू हो जाय। इसलिये झिझके। मगर जमीला के ख्याल ने और इस तरह के और ख्यालात ने जो उसने बाद में बनाये उसको इस क़दर पावजोलां (प्रोत्साहित) और मजबूर कर दिया कि आखिर चोरी पर आमादा हुआ और हराम की कमाई पर तैयार हुआ। क्या था? क्या हो गया? उसके ख्यालात ने उसको कैसी मदद दी? क्या ढंग अख़्तियार किया और कैसे उसको जकड़ दिया? यह मोटी-मोटी मिसालें हैं जिन्होंने उस तांता में मोटी-मोटी कड़ी पैदा कर दी। और इन ख्यालात को तलातुम (संघर्ष) से गर्मी पैदा होने लगी। इस गर्मी ने सेंक का काम किया जिससे उनमें और भी मजबूती आ गई। ठोसता बढ़ती गई। जाल और मजबूत होता गया। अब उसने जिस डोरी में अपने आपको जोड़ा था उससे नई-नई बातें तरश्शो (टपकने) होने लगी। कहीं पर फिर गर्मी गुस्सा की शक्ल में नमोदार होने लगी। कहीं पर नफ़्स अम्मारा (काम वासना) की ख्वाहिशों में इजाफ़ा

(बढ़ावा) होने लगा । कहीं पर ऐसी बातें पैदा हो गईं कि जिससे उन क्रुवा की पैरवी में मदद मिली । गर्जें कि कहाँ तक कहा जाय ? मुस्तसिर यह कि माजूने मुरक्कब (मिश्रण) तैयार हो गयी । अब इनकी वापसी की तरकीब यह हो सकती है कि जो असरात अपने अन्दर लिये हैं उनको फेंकता या निकालता चले और इस्तदाई हालत को उसमें जगह दे । ख्याल को मजबूत बनाये और इसको और्ध्वपन से हटाये । खू को फेरकर ऊपर की तरफ खू कर दे । ऊपर की करना चूँकि अब अपनी ताकत से बाहर हो गया है इसलिए अपने आप को किसी ऐसे बुजुर्ग हस्ती से खू करे जिसका ख्याल ऊपर की तरफ मुस्तहकम (पक्का) हो गया हो ऐसा कि उसमें वजात खुद यह कुदरत (स्वभाव) न रही हो कि वह उसको नीचे की तरफ कर सके । चूँकि ख्याल में उल्टापन और और्ध्वपन मौजूद है जिसके मानो यह है कि उसने पस्ती (नीचे) में आकर कसीफ़ (स्थूल) सूरत अस्तयार कर ली है । इसलिए जब ऐसा शख्स ऊपर जाने का इरादा करे तो अपने हमजिन्स (सजातीय) से अगर मुहब्बत और ख्याल का लगाव पैदा करे तो ख्याल को भी हम जिन्सियत की वजह से मदद मिलेगी और उसको ख्याली अन्सर (मानसिक विचार) ऐसे खिलाफ़ न मिलेंगे जो बे तरतीबी पैदा कर सकें । साथ ही साथ ऐसे आदात भी बनाना चाहिए जो इस जाल को उखड़ने और तितर-बितर करने में मददगार होती रहे । कान को चाहिये कि नेक बात सुने । आँखों को चाहिये कि नेक बात देखे । दिल को चाहिये कि वह नेक काम करने पर आमादा रहे । ऐसी बहुत सी बातें हैं जो करने से खुद ब खुद मालूम होती रहेगी । अलावा इसके इस जाल को खुद ब खुद तोड़ने की कोशिश करे । हर मन्ज़िल पर इसके तोड़ने के मुस्तलिफ़ ध्यान और मराक़बे (तरीके) हो सकते हैं । इरादा साथ ही साथ यह ज़रूर करे कि इसको तोड़कर रहूँगा, और कोशिश में लग जावे । मुस्तलिफ़ चक्रों में मुस्तलिफ़ गुथियाँ इस जाल में लग गई हैं, और लगती रही हैं । इसमें किसी ऐसे शख्स का

सम्बन्ध बहुत मदद दे सकता है जिसने अपने जाल के बन्द तोड़ दिये हों ।

इस फ़िलस्फ़ा पर निहायत होशमन्दी से गौर करना चाहिये । यह राज़हाय सरबस्ता (गहन भेद) हैं जो खोले जा रहे हैं । इसलिए कि इन पर गौर करके अमल किया जावे । इस मजमून के बाद मेरा यह मारुज़ा (प्रार्थना) है कि उस जाल को जो आपने खुद बुना है तोड़कर उस ताक़त को जो कुदरत की जान है और जो मस्फ़ी (गोपनीय) सूरत में मौजूद है आपको फिर अपनाना चाहिये और सादगी की मिसाल को जो गौर करने पर ख़िला (शून्य) में हर शख्स के पेश नज़ हो सकती है अपना मक़सद मानकर हमको मन्ज़िल तक पहुँचने की कोशिश करना चाहिये । इस तरह पर कि जुमला क़ुवा मुदरिका (विचार) व महसूसा (अनुभव) वग़ैरा सब उसमें लय व फ़ना हो जाँय और उनकी कंफ़ियत अपने पहले के लिये हुये असरात ज़ायल (नष्ट) करके बिल्कुल ऐसी हो जाय कि आपकी हालत उससे मिल जुल जाय । तब समझिये कि आपने अपने आप को उस तरफ़ राग़िब (भुका) कर दिया है । तरीक़ा यही हो सकता है जो ऊपर बयान किया जा चुका है । यानी उछल फ़ाँद और चढ़क भड़क कम करता चले । उन चीज़ों को जो अपने में शामिल हो गई हैं ठेस देता चले ताकि वह जाल जो आपने ही बुना है टूट जावे, और, आप वह निखरी हुई हालत जिस पर आप को जाना है सही तौर पर मज़ाहरा (देख सके) कर सकें । यह बात उस वक़्त हासिल हो सकती है जब आप, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, किसी ऐसे शख्स की सोहबत अस्तियार करें जो अपना जाल तोड़कर उसमें काफ़ी तौर पर पैर चुका हो ।

उसूल नम्बर-५

हमेशा सच बोले और हर मुसीबत को मालिक की तरफ से अपनी भलाई के लिए समझे और उसका धन्यवाद दे।

सच बोलने के मानी दर हकीकत यह है कि अपने आपको जैसे का तैसा जाहिर करे। यह वह हालत है और वह कैफियत जिस पर पहुँच कर आदमी बे अख्तयार यही कहने लगता है "जो है सो है"। कोई अल्फ़ाज किसी तरह पर इस हालत का तर्जुमा नहीं कर सकते। यह वह कैफियत है जो वाकई अस्ल ही अस्ल है। इसको वाकई तौर पर कैफियत के नाम से मन्सूबा (पुकारना) करना भी इस हालत में एक तरह का बट्टा लगाना है। अब हमने जो लफ्ज़ हालत इस्तेमाल किया है वाकई यह भी नहीं है। यह दर हकीकत वह नुक्ता है जहाँ पर कि कुल ताकतें सिमिट सिमिटाकर प्रलय के वक्त जमा हो जाती हैं और अस्तियत ही अस्तियत बाक़ी रह जाती है। अब लफ्ज़ अस्तियत जो मैंने इस्तेमाल किया है वाकई यह भी उसका सही तर्जुमा नहीं है। यहाँ पर जुमला एहसासात कुल्लियतन ख़त्म हो जाते हैं। अगर हम इसको ताकत कहें तो भी एक तरीक़े का माहियत का परदा हम इस पर डाल देते हैं। अब क्या कहा जावे ? कहना भी मादूम (निरर्थक) है। अब अगर इसके लिये लफ्ज़ अदम (शून्यता) इस्तेमाल करते हैं

तो भी इसमें एक तरह का गुमान या वहम किसी पदों का होता है। खैर अब क्या कहें ? अब एक लफ्ज़ हस्त (वह है) रह जाता है जिससे मुमकिन है कि हम इसका इज़हार कर सकें। अगर हम इसका ख्याल बांधते हैं तो भी किसी चीज़ का उसके आखिर में गुमाँ होने लगता है और फिर वही मादियत का एहसास शुरू हो जाता है। अगर हम इन दोनों चीज़ों को गायब करके उस तरफ़ ख्याल दौड़ायें तो भी कुछ न कुछ बाकी रहता है। अब फ़रमाइये क्या कहा जाय ? अब कुछ नहीं मिलता जिससे उसको साफ़ किया जा सके। बस यही कहना पड़ता है "जो है सो है।" इस चीज़ की तक्रल बस यही मानकर हो सकती है कि सब कुछ होकर आखिर में मानना ख़त्म कर दिया जाय। यह अभ्यास पर मुबनी (निर्भर) है कि वह सत ब्योहार से अपने आपको उस तरफ़ ले आवे। थिरता की हालत इस काम में मदद देगी। मगर यह थिरता मन्ज़िल पर पहुँचने से पहले ही ख़त्म होना चाहिये। तब अस्तियत का भास (एहसास) हो सकता है। और, भास होना भी ख़त्म हो जाय तब कहीं समझिये कि अब इसकी इन्तदाई हालत पर पहुँचते हैं। हम सच बोलने की आदत इस वजह से बनाते हैं कि वह बात जो ऊपर बयान की गई है उससे हम चिमट कर वैसे ही ब्योहार करने लगे जिसके होने से कुदरत ने अपने ब्योहार शुरू कर दिये हैं। अब भक्ति का रंग शुरू होता है जिससे बन्दे को बन्दगी का एहसास होना शुरू हो जाता है। मालिक का ख्याल वन्दे पर मनकूश (छाप पड़ने) होने लगता है। यार की सख्ती भी प्रेमी को भाती है। और उसमें भी ऐसी लोच महसूस होती है और मुहब्बत टपकती है कि उसमें उसका जी खुश रहता है। जो झिड़कियाँ उसको यार की तरफ़ से मिलती हैं वह बहुत अच्छी लगती हैं। इसमें भी खुशी पैदा होती है। झिड़कियों की अगर भद्दी शक्ल ली-जावे तो उनकी एक तरह की मुहीब (डरावनी) शक्ल बन जावेगी। इसको लोग मुसीबत के नाम से मन्सूब करने लगते हैं। यह चीज़ जो ठोसता

की हालत में आई है वह भी इस आसानी से गवारह (सही जाती) होती है कि उसका गिराव जो दिल पर होता है एक गुना फ़रहत (थोड़ी प्रसन्नता) बरूशने लगता है। जब यह हालत पैदा होती है तो वह जजबा जो उसमें शामिल होता है उसको धन्यवाद या शुक्रिया की हालत कह सकते हैं। यानी उसने उस चीज़ का कितने अच्छे तरीक़े से ख़ैर मक़दम (स्वागत) किया और अब उसी हाल में ख़ूश है। इसलिए कि यह सब चीज़ें उसके प्रीतम की तरफ़ से आई हुई है—

शेर : मकुन जे गुस्सा शिकायत कि दर तरीक़ अदब
बराहते न रसीद आँकि ज़हमते न कशीद^१

इसका अन्जाम ख़ुशी ही ख़ुशी है। और वह दायरा ख़ुशी में घसिटने लगता है। जब इस दायरे में उसकी काफ़ी मज़ाबलत (घुसपैठ) हो जाती है तो यह ख़ुशी उसकी जबल्लत (स्वभाव) हो जाती है और इसका एहसास उसके गुमां में आना भी बन्द हो जाता है। होते-होते यह बात ऐसी हो जाती है गोया उसकी चड़क भड़क भी उस दायरे में पैदा नहीं होती। जब यह हालत पैदा हो गई तो फिर क्या है? उस दायरे में अपना पैराब शुरू हो जाता है जो ही असल है। आगे चलकर तैराकी का गुमाँन जाता रहता है। उसकी वह ताक़त जो सहनशीलता से पैदा हुई है इस काम में मदद देने लगती है, और, उस दायरे में जिसकी इन्तहा बयान की जा चुकी है दाख़िल हो जाता है और आगे जो कुछ होता है उसका ज़िक्र काफ़ी हो चुका है। प्रीतम को प्रेमी की भिड़कियाँ बहुत अच्छी मालूम होती हैं और उसको उनसे एक तरीक़े की गुदगुदाहट पैदा होती है। यह मन्ज़िल हमारे यहां अभ्यासियों की अवसर होती है और लुफ़्त भी हासिल होता है और वह उसको पसन्द

(१) परमात्मा के मार्ग पर विपत्तियों के प्रति क्षोभ न व्यक्त करो क्योंकि बिना कष्ट उठाये किसी ने भी सुख नहीं प्राप्त किया।

करने लगता है। इसका नतीजा यह होता है कि ऊपर लिखे हुए दायरे में वह दाखिल हो जाता है। अब यह चीज़ किस क्रूर भलाई के लिए थी जो उसके लिये ऊपर से आई हुई थी। जब इस दायरे से आगे बढ़ता है और सकूने कल्बी (आन्तरिक शान्ति) नसीब होने लगता है तब उसको एहसास होने लगता है कि यह सब बातें उसकी भलाई के लिए आई हुई थीं जो मुसीबत और झिड़कियों की शकल में नमोदार हुईं। और कीजिये यह किस क्रूर कीमती चीज़ें थीं जो अतिया (उपहार) की शकल कही जा सकती है। बस इन चीज़ों पर खूश होकर बेअस्तियार ऐसे अलफ़ाज क्यों न निकल जावें जिसको आमतौर पर लोग धन्यवाद या शुक्रिया की शकल में जाहिर करते हैं।

उसूल नम्बर-६

कुल जगत को अपना भाई समझे और सबके साथ
ऐसा ही व्यवहार करे ।

कमालेश्वराकृत इन्सानी यह है कि बन्दा हमेशा बन्दगी के दायरे
में रहे । जो चीज अपनी अस्ल से आई हुई है उसको ऐसा ही समझे
गोया एक मुम्बा से (श्रोत) सब रवां है । जब यह हालत है तो उसकी
शक्ल ऐसी हो जाती है जैसा बच्चा बतने मादर (पेट) में परवरिश पाकर
बरामद होता है । जितने भाई और बहनें एक ही मां के पेट से पैदा
होते हैं सबका एक दूसरे से यही ताल्लुक और रिश्ता रहता है, और,
सब उसमें बंधे हुए हैं । अब इस दायरे से जो अशिया (वस्तुयें)
मुक्तलिफ़ रूप में बरामद हुए हैं उनका यही रिश्ता समझना चाहिये
जो अपने भाइयों का है जो एक मां के पेट से बरामद हुए हैं । इसमें
जो नुक़्ता है किसी के समझ में नहीं आया । वह मर्कज़ जिसके गिर्द
हरकत होने से सब कुछ बरामद हो जाता है और सब मिलमिलाकर
काम करना शुरू कर देते हैं सब की निरबत उसी अस्ल से रहती है ।
गैरियत (पृथकता) का ताल्लुक वाकई नहीं है । यह अपना पसारा
है कि यार अशियार (शत्रु) मालूम होते हैं । यह सब अपनी ही खुदगर्ज़ी
की हलत है जो सब में पँवस्त (घुस) होकर उन सब को ग़ैर तसव्वर
(विचार) करा देती है । इस चीज़ को तोड़ने की ज़रूरत है इसलिए

कि अस्ल बिरादराना ताल्लुक महसूस होने लगे । यह भी एक परदा है जो बन्दा (मानव) में हायल (पड़ा) रहता है । जैसे कुम्बा बढ़ने पर उसके अफ़राद (भाग) दूर मालूम होने लगते हैं इसी तरह से ज़माना गुज़रने पर अपने भाई बन्धु दूर महसूस होने लगे । वह हालत जो सब में पैवस्त थी ख़याल के दायरे से ओझल मालूम होने लगी । महज़ उसकी ठोसता का रूप निगाह के सामने रहा । इसी से हमने मुहब्बत शुरू कर दी । उस चीज़ की तरफ़ से जो अस्ल थी और सबमें मौजूद थी हमने अपनी निगाह हटा ली । इस चीज़ के असर से जो नमूना पैदा हुआ बस वही निगाह के सामने बाकी रह गया । इससे जो कुछ मुहब्बत हम कर सके करते रहे । मगर जहाँ पर मुहब्बत हो गई उसके अन्दर दुश्मनी का राज़ भी छिपा होगा । ख़यालात की धारें ऐसी जागज़ी हुई कि मुख़्तलिफ़ तरीक़ों में उन्होंने अपना असर जमाया । कहीं पर कुछ बात पैदा हो गई और कहीं पर कुछ और नक्शा जम गया । हर चीज़ मुख़्तलिफ़ हो गई । इत्तशार (विभिन्नता) पैदा हो गया । अब इसने हमको एक दूसरे से अलाहदा कर दिया । यह सब शक्लें एक तरह से जाल का नमूना अफ़रादी (भिन्न) शक्ल में बन गई जिससे उन धारों को जो एहमास की शक्ल में हरजन वो इन्स (व्यक्ति) में नुमायां हो रही थी निगाह से ओझल कर दिया । अब भाई को भाई समझने की मशक़ करना गोया उस जाल को जो फ़र्दन-फ़र्दन बनाया गया तोड़ देना है; और इस चीज़ को जो भाई बहिन के ताल्लुक का एहसास दिला रहा है अपने करीब कर लेना है । इसी अभ्यास से भ्रातृ-भाव भासने लगेगा जिसका नतीजा यह होगा कि हम उसके करीबतर दिखाई पड़ेंगे । इसकी मज़ाबलत (सामिप्य) हमको इल्म हक़ीकी हासिल करने में मदद देगी । और वही चीज़ जो है सामने रह जायगी । जब यह बात बिल्कुल सामने रहेगी-तो ज़रूर आपस में मेल-जोल, संगठन वगैरह: की नीबत आ जावेगी । ज़्यादा बढ़न पर इसी ताल्लुक में हमारे ब्यवहार भी ऐसे ही ज़रूर होने लगेंगे कि हम

उस मेल मिलाप की हवा महसूस करेंगे, और, हमको एक दूसरे से तसक्कीत और शान्ति मिलती रहेगी। कितना अच्छा हो अगर हमारे व्योहार संभल जावें। एक चीज तो हमें यों मिल गई। दूसरी चीज की फ़िक्र है। वह चीज भी मिलना इससे आसान हो जाती है। दुनियां दरहकीक़त उक्वा का अक्स (परलोक का प्रतिबिम्ब) है। अगर हमने इस अक्स को संभाल लिया तो फिर अक्स डालने वाली शै (वस्तु) पर मां उसका असर पड़ेगा। और जब संभली हुई चीज का असर अपनी अक्स डालनेवाली चीज पर पड़ेगा तो उसमें भी शुद्धता पैदा होने लगेगी और हमारा मामला और भी आसान नज़र आने लगेगा। इससे हमको एक गुना उस चीज के हासिल करने में मदद मिलेगी। हमारे काम जब यहां के दुरुस्त हो गये तो इसका असर वहां भी पड़ेगा। अक्स डालनेवाली चीज से मेरा मतलब ब्रह्माण्ड या आलम कुबरा से है जहां पर हर चीज पहले आती है। इसके बाद उसका ज़हूर यहाँ इस दुनियाँ में होता है। कुबरा में चीजें उससे ऊपर के हिस्से से आती हैं और यह तरतीब बराबर ऊपर तक चली गई है। लेहाज़ा अगर हम आखिरी तह को दुरुस्त कर लेते हैं तो उसका असर अक्स डालनेवाली चीज पर पड़ता है और वह चीज शुद्ध होने लगती है। अब जिसका असर उस डालनेवाली चीज पर गिर रहा है उसको भी शुद्ध होने में हम इस तरह से इमदाद करते हैं। और यह सिलसिला बराबर चला जाता है हत्ता कि वह इन्तदाई तह भी इस तरीक़े में शुद्ध हो जाती है। कहिये हमारा मामला किस क़दर सहल से बनता चला जाता है !

उसूल नम्बर-७

अगर किसी से कोई तकलीफ़ पहुँचे तो उसका एवज लेने का ख़्वाहां न हो बल्कि मालिक की तरफ़ से समझे और उसका शुक्रिया अदा करे ।

दुनियां के सब मज़ाहिब बिलइत्तिफ़ाक़ (एक मत से) कह रहे हैं कि जो कुछ होता है अपने कर्मों का नतीजा है । इसके खिलाफ़ ईज़ा (हानि) किसी को पहुँच ही नहीं सकती । जब यह बात है तो फिर हम क्यों न समझ लें कि दरहक़ीक़त यह इस तरह पर हमारी बनाई हुई क़िस्मत का क़रिश्मा है । हमने अपनी क़िस्मत खुद बनाई थी । वह कैसे बनी ? इसका हल यह है कि जो काम हम किसी तरीक़े से दिल और दिमाग़ लगाकर करते हैं तो हम इस असल चीज़ में जो कि इन सब चीज़ों के आने की बुनियाद है नक़्श बना लेते हैं और वह चीज़ बीज रूप में उस वक़्त तक मौजूद रहती है जब तक भोग कर हम उसके नक़्श मिटा न दें । उसका भोगना लाज़िम है । क़ुदरत का नियम है कि वह चीज़ ऐसी ही साफ़ शफ़ाफ़ (स्वच्छ) रखना चाहती है जैसी कि इस्तदा में आई है । इस पर ज़रा भी गुबार पड़ जाने से इसकी चमक दमक मन्द पड़ जाती है । ताक़त और क़ुव्वत होने की वजह से खुद यह एक तरह की ज़िन्दगी अस्तियार कर लेती

है और इसकी निस्वत कर्म के लेहाज से हो जाती है और यह इस वजह से कि हमने अपने आपको कार्य करनेवाला समझ लिया है। इसी ख्याल के जोर ने उसमें नक्श बना दिये हैं। जब यह सामान काफ़ी तौर पर मुहय्या हो चुकता है और उसमें काफ़ी बल पड़ चुकते हैं इसमें ख्याल की गर्मी भी शामिल होती है जिसकी वजह से इसमें चेतनता और भी बढ़ जाती है। चेतनता बढ़ने की वजह से उनमें एक तरह का उबाल शुरू हो जाता है। कानून क्रुदरत है कि जो चीज़ जहां से आती है उसी जगह पर वापस होने की कोशिश करती है और उसी तरफ़ को उसके जाने का रुझान हो जाता है जहाँ से कि आई है। अब उस चीज़ में गर्मी लग-लगकर यह हालत पैदा हो गई है कि वह उस भारीपन को बर्दाश्त नहीं कर सकती। पस लाज़िम है कि वह अपने आपको ख़ाली करने की गरज से उस जगह पर जावे जहां से कि आई है। छोटी चीज़ में से जब कोई चीज़ बरामद होती है और उसको जब काफ़ी मैदान मिलता है तो उसका भी फैलाव वसी हो जाता है। अब यह फैलाव जो हुआ है जसामत (देहपन) की वजह से काफ़ी जोरदार होता है। जब जसामत पैदा हो जाती है तो उसमें जोर भी उसी लेहाज से पैदा हो जाता है। क्योंकि आनेवाली चीज़ में कुव्वत भी शामिल होती है। जब यह हाल हो गया तो उसकी शक्ल अब दूसरे क्रिस्म की हो जाती है। जहां पर जो जगह है उन्हीं में वह समाने की कोशिश करती है, और, उन पदों पर अपना असर डालती है जो भोग के लिए मख़सूस (निश्चित) हैं। बस तकलीफ़ शुरू हो जाती है। इस चीज़ को मैंने बहुत मुस्तसिर बयान किया है वरना हर ख्याल की सूरत जुदागाना दिखाई जा सकती है। ऐसी शक्लें पैदा होने लगती हैं ख़्वाह अंदर पैदा हो जाय ख़्वाह बाहर से उनको मदद मिले मतलब सबका यही होता है कि वह चीज़ किसी तरह से साफ़ हो जाय। बेरुनी मदद जो अपने कर्मों के भोगने से मिलती है उसको लोग दूसरे की तरफ़ से ईज़ारसानी (हानि पहुँचाना)

का ख्याल बाँधते हैं और नावाकफ़ियत की वजह से जिस बेरुनी चीज़ से उनको भोग में मदद मिलती है अपना ख्याल उस जानिब से ख़राब कर लेते हैं। यह बात बिलकुल बेजा है इसलिए कि दरहक़ीक़त उसने उस चीज़ को साफ़ करने में मदद दी। गोया उसने एकगुना एहसान किया। जब यह बात है तो बाक़ई तौर पर उसी बेरुनी ताक़त ने किसी के ज़रिये जो काम किया है उसने आपको साफ़ होने में बहुत मदद दी। दूसरे मानी में उसने एक दोस्त का काम किया है। अब चूँकि आमतौर पर इस हद तक ख्याल नहीं पहुँचता और न इस फ़िलस्फ़ा पर कोई ग़ौर करता है इसलिए यही कह दिया गया है कि उस चीज़ को अपने मालिक की तरफ़ से समझे ताकि दिल में दुश्मनी का ख्याल पैदा न होने पावे और शराफ़त से किसी हाल में गिर न जावे। जो चीज़ कि बेहतरी के लिए किसी शख्स के ज़रिये से आई है दिल बे अस्तिथार उससे ख़ुश हो जाता है बल्कि यही हालत शुक्रिया की कही जा सकती है।

उसूल नम्बर-८

भोजन करने के वक्त जो कुछ मिल जावे खुशी से खावे और ईश्वर की याद में भोजन करे। शुद्ध और पवित्र कमाई का खयाल रखे।

यह एक बहुत बड़ा फ़िलसफ़ा है जिसका आशाज़ जिसमानियत से होता है और इसकी इन्तहा वही है जहाँ हम सब को पहुँचना है। ख़ुश रहना यह एक ऐसा समां (दशा) है जिसका असर उसके नीचे छनना शुरू हो जाता है। और इससे सब चीज़ें शुद्ध हो जाती हैं। यह वह हालत है जिसको दरहक्रीकत अगर हम ज्ञात के बाद वाली हालत कह लें तो तर्जुमा मुनासिब रहेगा। इसका खयाल बांधने से गोया हम उसका खयाल बांध रहे हैं जो हमारी आखिरी मन्ज़िल है। गोया इब्तदा हमने उस बड़ी हालत से की जिसके बाद बस वही रह जाता है। यह वह तीना बाना है जो क़ुदरत ने अपने आप बुना है। गोया दूसरे मानों में उसको क़ुदरत का मादी हिस्सा होना कह सकते हैं। वह मादियत भी कैसी जो बराय नाम और कहने मात्र, और जो, उस शुद्ध हालत का इन्क़शाफ़ (स्पष्ट) कराती है जिस पर हमको पहुँचना है। अब जिस चीज़ का एहसास होता है उसके लिये लफ़्ज़ मादियत यों इस्तेमाल किया गया है कि यह चीज़ बहरहाल वह म व गुमान में आ जाती है और मुमकिन है कि अक्सर लोग इसको धोके से पयाबी शिल्लफ़ कह जायें। मगर वह इस हालत का सही तर्जुमा

न होगा। यह वह हालत है जो बाकई मायावी परदे में प्रवेश किये हुए है। अब इसको खाना खाते वक्त हम ख्याल में लाते हैं जिसका असर उस मादा पर पड़ता है जो उसके नीचे है और जिस वक्त हम गिज्ञा खाते हैं तो जो चीज़ कि उस वक्त हमारे सामने हैं गिज्ञा में प्रवेश होने लगती है और उसका असर गिज्ञा में काफ़ी तौर से सरायत (प्रवेश) करने लगता है। गोया वह चीज़ जो हम खा रहे हैं उसको भी हमने उसके जेरे असर कर लिया है जिसका असर हमारी रगों में जाकर उनमें शामिल हो जाता है। गोया एक चीज़ जो बेरूनी हालत में भर रही है हमने उसका कितना अच्छा इस्तेमाल करके अपना काम निकाला। इससे वह परमाणु या ज़र्रात जो जिस्म में है शुद्ध होना शुरू हो जाते हैं और ख्याल का भटका उस चीज़ में भी पैदा हो जाता है जो गिज्ञा में शामिल होकर हमारी तन्दुरुस्ती रूहानी और जिस्मानी में मददगार होता है। प्राण की ताकत सब जगह छाई हुई है। कोई चीज़ इससे बरी नहीं है। गिज्ञा में भी है और उसके बाहर भी। हम अपने ख्याल का भटका उस चीज़ में देने लगते हैं जिससे उसकी ऐसी हालत हो जाती है जैसे कि दो पत्थरों के रगड़ने से शरारा (चिनगारी) पैदा होता है और उसकी हालत उस ताकत से जिसके ज़रिये शरारा बरामद हुआ है मुस्तलिफ़ और शुद्ध है और ज्ञात के सम्बन्ध से जो चीज़ कि बरामद होती है उसी के द्वारा हम ज्ञात की तरफ़ पहुँचते हैं इसलिए कि उसके बाद वाली हालत में यह ताकत नहीं है कि जो हमको अस्ल कैफ़ियत तक पहुँचा सके। वहम व गुमान सब इसके पीछे छूट जाते हैं। यह हमारे लिए ज्ञात में पहुँचने का रास्ता बना देती है। अब गिज्ञा में शुद्धता का ख्याल बांधने से उसमें हमने वह ताकत दे दी है जिसका शरारा हमको उस परदे तक ले जाता है जिसको हमने ज्ञात के बाद वाली हालत कहा है। गोया इतनी मन्ज़िल हम इतनी आसानी से पार कर जाते हैं।

अपने नियम में हमने ईश्वर की याद में भोजन करना फ़र्ज़ बताया

है। हमारे सब काम ऐसे होना चाहिये जिससे हमें अपने मकसद बरारी (ध्येय की प्राप्ति) में मदद मिले। अब चूँकि शिजा खाते वक्त हम सबसे आखिरी चीज़ जिस पर हमको पहुँचना है ख्याल बांधते हैं इसलिए कि हम उसका भी असर कुछ न कुछ साथ-साथ ले लेवें और शुद्धता में एक गुना और इज़ाफ़ा हो जावे ताकि उसका असर भी दुगुनी ताक़त के साथ उस पर गिरे और उसकी ताक़त ज़्यादा हो जाय। हमारा आगाज़ पवित्रता से हुआ है। वह शुद्ध धारें जो हमारे ज़ाहूर (उद्भव) का बायस हुई हैं शुद्ध ही मसकन (स्थान) से निकली हैं और इन्हीं की वजह से हमको शुद्धता का ख्याल पैदा होता रहता है। वह धारें जो हर जगह मौजूद हैं शुद्ध ही हालत में हैं। ऐसा कभी नहीं हुआ कि उन धारों में अशुद्धता पैदा हुई हो। यहां तक कि ज़माना भी उन पर असर न डाल सका क्योंकि वह धारें एक ताक़तवर चीज़ से बरामद हुई हैं। पवित्रता उसमें कुल्लियतन दौड़ी हुई है। वह ज्ञात का भन्नाटा जो आगाज़ आलम को बायस हुआ है उसके फ़ैल ही के असरात हैं जो धारों की शकल में नुमायां हैं, और, सब पवित्र हैं और उनसे जो चीज़ें बनी हैं इब्तदाई हालत में वह भी शुद्ध थीं। मगर इन बनी हुई चीज़ों पर ज़माने के असरात ने उनको ख़ालिस हालत में नहीं रखा और यह दरअसल हमारा ही करिश्मा था जैसा कि उसूल नम्बर (४) में बयान हो चुका है।

नेचर की कमाई हुई चीज़ किस क़दर शुद्ध हालत में है। इसलिए कि उसकी बुनियाद शुद्धता से हुई है। आपकी कमाई हुई चीज़ उस वक्त शुद्ध हालत में रह सकती है जबकि उसकी भी कमाई शुद्धता और पवित्रता के साथ हो। इसमें जो असरात होंगे अपने करीब तर परदे पर अपना असर डालेंगे और इस जाल को जिसकी आपने बुना है शुद्ध करने में मदद देंगे। इसलिए महात्माओं ने शुद्ध और पवित्र कमाई पर बहुत जोर दिया है।

उसूल नम्बर-६

अपना रहन-सहन और व्योहार ऐसा उमदा बना ले कि जिसको देखने से लोगों में नेक ख्याली का एहसास हो और लोग उससे मुहब्बत करने लगें ।

हमको ताकत अपने ख्याल से मिलती है । यह कब ? जब उसी के तरीके में अपनी चीजों में ओर जो उसकी बनाई हुई है हमआहनगी (समरसता) पैदा कर लें । लफ्ज व्योहार इतना वसी लफ्ज है कि यह कुल उस दायरे को मुहीत (घेर) कर लेता है जो ज्ञात के बाद नमोदार हुआ है । ईश्वर के व्यवहार में यकसानियत (समानता) भी है मगर एक मानों में । मसलन, वह सब को बराबर रोशनी देता है, सब के सांस लेने के लिए उसने हवा पैदा की है, और बहुत सी ऐसी चीजें बनाई हैं जो कि ज़िन्दगी को बढ़ानेवाली हैं, बल्कि ज़िन्दगी का इनहेसार (निर्भरता) इन्हीं पर है । इसको बरतावे की यकसानियत कहते हैं । अब दूसरी चीज़ आती है जो उसके पास बन-बनकर पहुंचती रहती है । उसके साथ बरतावा और तरह का होता है । जाहिर है कि मिट्टी से बनी हुई चीज़ जब सामने आती है तो इन्सान की नज़र उस पर और तरह की पड़ने लगती है । मिट्टी से जब हम खिलौना बनाते हैं तो एक गुना हमारी रगवत (आकर्षण) बमुक्ताबले मिट्टी के इससे ज्यादा हो जाती है । इस तरह से जब इन्सान बना बनाया

उसके सामने पहुंचता है तो उसकी निगाह कुछ और ही हो जाती है। बस मालूम हो गया कि हमको अपने आपको ऐसा बनाना चाहिए ताकि उसकी निगाह हम पर ऐसी घूमे कि हम उस रोशनी को बराह रास्त लेने के लिये खते उस्तवा (केन्द्र बिन्दु) बन जाय। यह व्यवहार कुदरत का है जिसकी हमें नक़ल करनी चाहिये। अब रोज़ाना की जिन्दगी में जो हमारे सामने है हम ऐसे ही व्यवहार अदा करें जो उसने (ईश्वर ने) हमारे साथ किये हैं और कर रहा है।

कुदरती व्यवहार जाहिर कर दिये गये हैं और उनके असरात भी हर चीज़ को देखने से नुमायाँ होते हैं। मुखतलिफ़ रंग मुखतलिफ़ चीज़ों में पाये जाते हैं। बाग़ में एक फूल खिलता है उसका रंग सुर्ख़ होता है। दूसरा फूल वहाँ पर उगता है जिसका रंग ज़र्द (पीला) या नीला होता है। गोया कुदरत अपना जलवा मुखतलिफ़ रंगों में दिखा रही है। जिसकी जैसी लियाक़त और इस्तेदाद (क्षमता) हैं उसको उसी के मुताबिक़ हिस्सा मिल रहा है। गोया वह उनके साथ इस तरह का ब्यवहार अपना रूप लिये हुए कर रही है। बस यही मिसाल हमको हर सूरत में बरतावों के लिये मद्दे नज़र रखना चाहिये। जहाँ पर जैसी ज़रूरत हो वैसा ही हम ब्यवहार अदा करें। जब इस काम की हमआहनगी कुदरत से हो जावेगी तो उसमें असर पैदा हो जावेगा जिसका नतीजा यह होगा कि लोगों का खिचाव हमारी तरफ़ होने लगेगा। अगर यह चीज़ ठीक तौर से अदा हो जाय और आप उसी के मुताबिक़ इसका हक़ दूसरों को देने लयें तो उनकी क़शिश (आकर्षण) अज़ख़ुद (स्वतः) आपकी तरफ़ मबजूल (खिंची) हो जायगी और इसी क़शिश को मुहब्बत कहते हैं। जब दूसरों का हक़ आपके मद्दे नज़र होगा तो दूसरे लोग इस ताक़त के ज़ेरे असर होकर जो आपमें हमआहनगी पैदा होने से हुई है आपसे भी वही बरताव रखेंगे जिसके आप अहल (पात्र) हैं।

उसूल नम्बर-१०

अगर कोई अपराध भूल से हो जावे तो सोते समय ईश्वर को अपने सन्मुख समझ कर उससे दीनता की हालत में क्षमा मांगे और पश्चाताप करे। और इसके लिये प्रार्थना और कोशिश करे कि आइन्दा कोई अपराध न होने पाये।

कमाल इनसानी (मानव जीवन की पूर्णता) इसमें है कि मालिक को अपना मालिक और अपने आपको उसका बन्दा समझे, और, बन्दगी अदा करता रहे। ऐसा करने से गोया आपने अपने में नफ़ी (निषेध) की हालत कायम कर ली। और जिसकी वजह से उसकी निगाह आप पर सीधी पड़ रही है। गोया मालिक की नज़ार आप पर काफ़ी तौर पर सबजूल (खिची) है, और आपने उससे एक क्रिस्म का सम्बन्ध जोड़ लिया है। जब यह हालत है तो हमको लाज़िम आता है कि हम अपना हक़ ऐसे ही तरीक़ों में अदा करते रहें। और इस बात को यानी उस रिश्ते को बराबर कायम रखें ताकि मालिक की अज़मत (बढ़प्पन) हम पर मनकूश (अंकित) होती रहे और उसकी निगाह हमेशा हम पर सीधी पड़ती रहे। बन्दे को सिर्फ़ इस बात से ग़रज़ है कि उसका मालिक उसकी तरफ़ किसी तरीक़े में ख़याल रखे और नज़ादीकी कायम

रहे। अब शराफत कुछ और रख बदलती है। जब हमने उसको अपना मालिक समझ लिया है तो हर गलती जो सहवन (भूल से) हो जाय और उसूल के खिलाफ हो तो हम उस गलती को उसके सामने खतावार (दोषी) की हैसियत से जैसे को तैसा रख दें। ऐसा करने से हमारी बेचारगी साबित होती है। और मालिक को भी ख्याल होता है कि बन्दा ने जो गलती की है वह वाकई काबिल माफ़ी है। इसलिए बेचारगी का ख्याल बन्दे के दिल में मौजूद है। तब तो उसने इस चीज़ को मालिक के सामने पेश किया है। इस अहद (भाव) में वह लोच और नरमी है जिसका तर्जुमा अल्फ़ाज़ से अदा नहीं हो सकता। इस लोच का नक्शा एक और फिरता है और वह बेचारगी का यकीन दिलाता है। इसके मानी यह होते हैं कि वह चीज़ें जो उसमें हायल (रूकावट) थीं उनको अब उठा दिया है। वह वज़न जो उस पर मौजूद था अब हट गया है और उसकी सूरत अब बिल्कुल खुलूस की रह गई है जो नेचर की उस धारा से मिलती जुलती है जिस पर कि मल, दिक्षेप, और आवरण के गिलाफ़ नहीं हैं। गोया उस चीज़ को हम ख़ालिस सूरत में रिश्ते बन्दगी जोड़ कर लाये हैं। अब यह चीज़ सादगी का एहसास दिलाती है जो वाकई कुदरत का जान है। बढ़ते-बढ़ते यह हालत यहां तक हो जाती है कि उसी चीज़ में हम अपने आपको लिपटे हुए महसूस करते हैं गोया हमामतन (पूर्णतया) हमारी वही कैफ़ियत हो जाती है जिसको कि हमें हासिल करना है। गलतियां जिससे कि बन्दा कभी बरी नहीं हो सकता इस दायरे में आकर ऐसी रह जाती हैं गोया वह चीज़ ख़ुद अपनी ज़िन्दगी से हाथ धो बैठती है। इस रिश्ते के जोड़ने से पहले मुमकिन है कि बड़ी बड़ी गलतियां सरज़द (निर्मित) हों और फिर यह कम होती चले यहां तक कि उनकी शक्लें मिटने लगे। या यूँ कहिये कि हमने अपनी क्रुब्बत इरादी का झटका इसमें काफ़ी तौर पर लगा दिया है और उसकी शक्ल एक तरह की पश्चाताप की बन गई है। पश्चाताप

और कुछ नहीं है बल्कि यह खटक है जो उस लहर में पैदा हो जाती है और इसको ऊपर से यक्सानियत क्रायम रखने के लिए एक लहर दौड़ने लगती है। गोया इस चीज़ को जिसको मैंने खटक के नाम से मनसूब किया है दूसरी चीज़ आकर इसको साफ़ कर देती है। यह पश्चाताप की सूरत है।

जिस हालत को मैंने बेचारगी कहा है उस हालत को पैदा कर लेना दीनता की हालत कहलाती है, और, यह ऐसी चीज़ है कि जिसके हिस्से में आ गई उसने वाकई सब कुछ पा लिया है। इसमें मासूमियत की हालत मौजूद है गो वह बादी उल नज़ार (ऊपरी तौर पर) में ऐसी मालूम न होवे। जब यह बात है तो वह गलती वाकई गलती नहीं रही। इसलिए कि इस हालत ने उसको क़तई तौर पर धो दिया है। अब एक हिस्सा बन्दगी का यह आता है कि हम आइन्दा के लिए अपने आपको ऐसा होशियार करें कि फिर गलती न होने पावे, और उसकी सूरत यही हो सकती है कि हम बार बार उस मालिक की दरगाह में रुजू हों कि हमको इस्तगना (स्थिरता) की हालत अता फ़रमाये कि यह अपराध दोबारा न हो। चूँकि हम बन्दा की हैसियत से उस दायरे में शामिल हुए हैं लेहाज़ा हम पर यह लाज़िम आ जाता है कि फ़रायज़ अदा करें और इस बात की कोशिश करें और ख़याल रखें कि इस बात से हम दूर रहें जिसकी कि क़ानून क़ुदरत में मुमानियत है। यह बात उस वक़्त अच्छी तरह होगी जबकि जो फ़ासला कि हम बन्दा और आका के दरमियान क्रायम किये हुए हैं इसको नज़ादीक़तर करें। इस वजह से बेहतर तरीक़ा यही हो सकता है कि उसकी मौजूदगी अपने ख़याल के परदे के सामने ले आवें।

सोते वक़्त इसका करना यूँ अच्छा समझा गया है कि उस वक़्त हम अपने सब भ्रमों से फ़रागत पाये होते हैं और सिवाय आराम

करने के हमको कोई काम करना बाकी नहीं रह जाता है । गोया सिर्फ एक नुक्ता सोने और आराम करने का इन्सान के सामने रहता है और हर काम से अपने आपको फ़ारिग पाता है या यूँ कहो कि वह अपने आपको किसी हद तक आज़ाद पाता है । यह आज़ादी भी क्रुदरत की एक इस्तश्ना की हालत कही जाती है । गोया दूसरे मानों में आप क्रुदरत के किसी हिस्से से हमआहनगी अस्तयार किये हुए हैं । इसलिए उस वक़्त हमको इस काम के करने की ज़्यादा ताक़त होती है । यही वजह है कि उस वक़्त पर दुआ में ज़्यादा असर होता है और हर काम जो उसके मुताबिक़ किये जाते हैं ठीक बैठते हैं । इस इस वक़्त से फ़ायदा उठाना चाहिये और जो काम कि इस वक़्त के लिये हैं उसको ज़रूर करना चाहिये ।